श्री समवशरण विधान

आशीर्वाद : परम पूज्य आचार्य 108 विद्या भूषण सन्मति सागर जी महाराज

आधारित मन्त्र- स्व. कविवर श्री कुंवर लाल जी

रचियता : आर्यिका 105 स्वस्ति भूषण माता जी

उपलक्ष :

परम पूज्य आर्यिका श्री 105 स्वस्ति भूषण माता जी

की 1-11-2004 को 35वीं जन्म जयन्ती पर सादर समर्पित

प्रकाशक : सृष्टि-स्वस्ति केन्द्रीय मण्डल

कार्यालय : (राजकुमार जैन) जैन मन्दिर, प्रताप नगर, सहारनपुर फोन : 0132-2658403, 2658546

प्रथम संस्करण : सन् 2004 प्रतियां : 1000 साहित्य सृजन हेतु न्यौछावर राशि : बीस रुपये

प्राप्ति स्थान :

1. **सृष्टि-स्वस्ति केन्द्रीय मण्डल,** गली जैन मन्दिरजी, प्रताप नगर, सहारनपुर (उ.प्र.) फोन : 0132-2658403
2. **श्री अरविन्द जैन** 220, लाल कुर्ती बाजार, अम्बाला कैंट फोन : 0171-2640822
3. **जैन साहित्य सदन,** दिगम्बर जैन लाल मन्दिर, चांदनी चौक, दिल्ली

लेजर टाइप सैटिंग- **राजीव जैन (ल्यूपिन कम्प्यूटर)** फोन : 0132-2613808

मुद्रक- **शुभम् ऑफसैट** रणजीत नगर, सहारनपुर फोन : 0132-2665394

सहयोगी :

श्रीमती पूनम जैन (धर्मपत्नी श्री राकेश जैन)

एवं पुत्र श्री अंकुर जैन, द्वारा राकेश फैब्रिकेशन, IX 2541, गली नं.12

कैलाश नगर, दिल्ली-31 फोन : 011-22081843

श्री समवशरण विधान (मांडला)

समवशरण का स्वरूप

समवशरण तीर्थंकर की ऐसी धर्म उपदेश सभा है जिसमें पशु-पक्षी, देव-मनुष्य, ऊंच-नीच, धनी-निर्धन, शत्रु-मित्र, पापी- पुण्यात्मा सभी एक साथ बैठकर आत्मकल्याणकारी उपदेश सुनते हैं बड़े-बड़े राजकीय और सामाजिक नेता भी इस सभा में सम्मिलित होकर अपनी जटिल समस्याओं का समाधान प्राप्त करते हैं। आचार्य जिनसेन ने बताया है कि जब चक्रवर्ती भरत के मन में कोई शंका उत्पन्न होती तो वे आदि तीर्थंकर ऋषभदेव के समवसरण में जाकर अपनी शंका का समाधान करते हैं। समवसरण ऐसी सामाजिक संस्था है जिसकी शरण में सभी प्रकार के लौकिक नेता पहुंचते हैं। वास्तव में धर्म नेता ऐसा लोकनायक होता है जो नि:स्वार्थ और निष्काम भाव से जनहित का उपदेश देता है। शील, संयम, सदाचार, व्यवस्था, मान- मर्यादा एवं सहयोग की भावना ही सामाजिकता का निर्वाह करने में समर्थ होती है।

उच्च आदर्शों की स्थापना एवं वैयक्तिक जीवन में विकार संशोधन भी इसी प्रकार की संस्थाओं से सम्भव है।

पौराणिक मान्यतानुसार समवसरण की रचना देवों द्वारा सम्पन्न होती है। कुबेर इन्द्र की आज्ञा से भगवान् की धर्मसभा की अद्‌भुत, दिव्य एवं अभूतपूर्व संरचना करते हैं। आचार्य कहते हैं-

सुरेन्द्र नील निर्माणं समवृत्तं तदा बभो । त्रिजगच्छ्रीमुखालोक मंगलादर्श विभ्रमम् ।।

अर्थ-इन्द्र नीलमणि निर्मित तथा चारों ओर से गोलाकार वह समवसरण ऐसा लगता था मानो त्रिलोक की लक्ष्मी के मुखदर्शन का मंगलमय दर्पण ही हो।

दिव्यध्वनि के द्वारा ही सर्व जीवों को धर्ममार्ग का ज्ञान होता है। धर्मतीर्थ का प्रवर्तन होता है। दिव्यध्वनि के विशेष विचार मृदु, मधुर, अति गम्भीर और एक योजन प्रमाण समवसरण में रहने वाली बारह प्रकार की सभाओं में विद्यमान देव, मनुष्य और तिर्यंचादि सब संज्ञी भव्य जीवों को युगपत प्रतिबोधित करने वाली दिव्यध्वनि होती है जेसे मेघ का पानी एक रूप है तो भी वह नाना वृक्ष और वनस्पतियों में जाकर नाना रूप परिणत हो जाता है उसी तरह दांत, तालु, ओष्ठ और कण्ठ आदि के हलन-चलन से रहित वह वाणी 18 महाभाषा 700 क्षुद्र (लघु) भाषाओं में परिणत होकर समस्त भव्यजनों को आनन्द प्रदान करती है अर्ध मागधी यह नाम भाषा रूप है।

धर्मचक्र-भगवान जब विहार करते हैं तो उस समय हजार आरों वाला धर्मचक्र भगवान् के आगे-आगे चलता है।

अष्टप्रातिहार्य-तीर्थंकर भगवान् का समवसरण अष्ट प्रातिहार्यों में समलंकृत है वे निम्न प्रकार हैं-

(1) सिंहासन (2) पुष्पवृष्टि (3) अशोक वृक्ष (4) छत्रत्रय (5) 64 चमर(6) देव दुन्दुभि (7) भामण्डल एवं (8) दिव्य ध्वनि।

तीर्थंकर भगवान् समवसरण में अष्ट प्रातिहार्य से समलंकृत हैं।

समवसरण पूजन विधान की रचना के भाव मेरठ में मई 2004 उत्पन्न हुए पंच परमेष्ठी को नमन कर गुरूवर आचार्य विद्याभूषण सन्मति सागर जी महाराज के पावन चरणों में नमोस्तु कर लेखनी प्रारम्भ हुई जो हरिद्वार में चातुर्मास हेतु विहार करते हुए मार्ग में लेखनी को विराम न देते हुए हरिद्वार की पावन धरा पर सम्पूर्ण हुई।

समवसरण पूजन विधान रचना में प्रस्तुत पंक्तियों में समवसरण की महिमा का गुणगान करने का प्रयास किया है और कहा है-

तीर्थंकर महावीर के समवसरण में मुख्य रूप से मगध सम्राट श्रेणिक प्रमुख गणधर गौत्म स्वामी से साठ हजार प्रश्न करते हैं। अपनी जिज्ञासाओं का समाधान पाकर सन्तुष्ट होते हैं।

तीर्थंकर वन में जाकर सभी परिग्रहों का त्याग करते हैं। तपश्चरण के पश्चात् चारों घातिया कर्म। (ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, मोहनीय, वेदनीय) का घात कर केवल ज्ञान को प्राप्त करते हैं। सौधर्म इन्द्र को जब ज्ञात होता है कि भगवान को केवलज्ञान की उत्पत्ति हुई है वे कुबेर को आज्ञा प्रदान करते हैं कि तुम तीर्थंकर की दिव्य ध्वनि सुनने के लिए समवसरण की रचना करो। कुबेर आज्ञा का पालन कर सुन्दर समवसरण की रचना करते हैं। गणधर के समक्ष तीर्थंकर की दिव्य ध्वनि खिरती है।

आर्यिका स्वस्ति भूषण

श्री समवशरण विधान प्रस्तावना

प्रस्तावना

समवशरण में राजते, तीर्थंकर भगवान । पूजन भक्ति मैं करूं, बारंबार प्रणाम ।।
चतुर्मुखी होकर दिखें, दर्श करें हर जीव । परम पिता के दर्श से, हो सम्यक की नींव ।।
तीर्थंकर के दर्शन से, तन-मन सब हुलसाय । आत्म संपदा प्राप्त हो, चरणन शीश झुकाय ।।
समवशरण वैभव महा, सुंदर सुमुख सुजान । तीर्थंकर का महल है, बैठे हैं भगवान ।।
पुण्य उदय कब आयेगा, हे जिनवर जिनदेव । हमको होगा दर्श कब, करूँ आपकी सेव ।।
समवशरण पूजन करूं, समवशरण में आन । यही भावना है मेरी, बारंबार प्रणाम ।।

छंद-भुजंग प्रयात

करी है तपस्या करम दुष्ट भागें, फिर दिव्य ज्ञान का दीप प्रकाशै ।
चहुं दिश है फैला धरम का उजाला, भव्यों के कंठों में भक्ति कीमाला ।
त्रिभुवन पति की हम पूजा रचायें, भक्ति का अमृत आओ हम पिलायें ।
स्वर्गों के इन्द्रों ने पूजा रचाई, जय-जय उचारे औ जयमाल गाई ।

शेर चाल (हे दीनबन्धु.....)

प्रभु घातिया को घात पूर्ण ज्ञान ले लिया । सौधर्म इन्द्र के सिंहासन को हिला दिया ।।
हो मग्न इन्द्र ने विचारा अवधिज्ञान से । जब हुआ ज्ञात किया नमन भक्ति भाव से ।।1।।
स्वर्गों के सभी देवों को है पास बुलाया । आज्ञा करी प्रभु दर्श का है ज्ञान कराया ।।
हर्षित कुबेर से कहा समशरण बनाओ । सुंदर सभी कोठे में वहां रत्न लगाओ ।।2।।
पाकर कुबेर आज्ञा को प्रभु पास में आया। करके नमन मनहारी समवशरण बनाया।।
मानुष तिर्यंच देव सभी दर्श को आये । जिनवर सभा के मध्य में हमें दर्श दिखाये ।।3।।
योजन है बारा आदिनाथ का समवशरण । क्रम-क्रम से घट के होता है वो एक ही योजन ।।
आकार गोल सुंदर सुखकारी धाम है । जिन ठाठ हो उसके वहां जो लेते नाम है ।।4।।

(दोहा)

जिनवर की छवि मोहनी, मोहे उनका ज्ञान । आकर हम पूजा करें, हमको दो वरदान ।।
समवशरण पूजा करे, मिले मुक्ति का राज । इन्द्र समान वे नर भये, नमता सकल समाज ।।

प्रस्तुति

चौपाई

पंचम गति पंचम ज्ञान पाये, शुभ समोवशरण शोभा बढ़ाये ।
शत इन्द्र चरण वंदन करते, मन वच तन से सेवा करते ।।
तिष्ठे सिंहासन पर जु आप, उपदेश सुने मिट जाये ताप ।
चौसठ शुभ चमर ढुराय देव, इंद्रादिक तिनकी करत सेव ।
तुम छत्र तीन फिरते हैं शीश, तीनों लोकों के आप ईश ।।
भामंडल की आभा अपार, हो सूर्य चंद्र की द्युति असार ।
सब शोक नष्ट करता अशोक, तुम दर्श से भागे रोग शोक ।
चतुबार दिव्य ध्वनि सुनत भव्य, जा नहि सकते हैं वहां अभव्य ।।

श्री समवशरण विधान

स्थापना (त्रिभंगी छंद)

चौबिस जिनवर, छवि है मनहर, भक्तों के मन भाती है ।
जिनसमोवशरण को, प्रभु चरण को, दृष्टि लख हर्षाती है ।।
नित करूं मैं पूजा, काम न दूजा, समोवशरण में मैं आया ।
मम हृदय पधारो, काज संवारो, आव्हानन करने आया।।

दोहा

भक्त पुकारे तुम्हें प्रभु, देते हैं आवाज ।
आकर दर्शन दो हमें, करते हैं हम आश ।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति जिनेन्द्रः अत्र अवतर अवतर संवौषट आह्वानन, अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनं, अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणं।

शंभू छंद

हूँ जनम-जनम का प्यासा मैं, जल से नित प्यास बुझाता हूँ ।

पर प्यास न मेरी शांत हुई, इसीलिये मैं जल ले आता हूँ ।।
चौबीसों जिन के समोवशरण में, भक्ति भाव भरकर आया ।
मुझको भी दर्शन शीघ्र मिले, यह आश हृदय में ले आया ।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति जिनेन्द्राय जलं निर्व. स्वाहा।

जग में कर्मों का पाप मिला, शीतलता की फिर चाह हुई ।
चंदन को शीतल है माना, आतम की न परवाह हुई ।। चौबीसों ...

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति जिनेन्द्राय चन्दनं निर्व. स्वाहा।

सारा ही जग पद पाने को, पुरूषार्थ निरंतर करता है ।
पर अक्षय पद अविनाशी है, आनंदित आतम करता है ।।चौबीसों ...

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति जिनेन्द्राय अक्षतं निर्व. स्वाहा।

शुभ भावों से हमें दूर करा, यह काम अशुभ करवाता है ।
पूजन को पुष्प मैं ले आया, जो अशुभ कर्म हरवाता है ।।चौबीसों ...

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति जिनेन्द्राय पुष्पं निर्व. स्वाहा।

भोजन करके फिर भूख लगे, न तृप्ती इससे पाई है ।
नैवेद्य बनाकर ले आया, तेरी छवि मुझको भाई है ।।चौबीसों ...

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति जिनेन्द्राय नैवेद्यं निर्व. स्वाहा।

उजियारा बाहर करता हूँ, अज्ञान अंधेरा है छाया ।
प्रभु ज्ञान दीप की ज्योति जगे, इसीलिये दीप मैं आया ।।चौबीसों...

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति जिनेन्द्राय दीपं निर्व. स्वाहा।

कर्मों ने सुखी दुखी कीना, कर्मों ने जग भरमाया है ।
कर्मों का धुआं उड़ाने को, वन्हि मैं धूप जलाया है ।।चौबीसों ...

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति जिनेन्द्राय धूपं निर्व. स्वाहा।

रसदार सरस फल खाने पर, ये मन आनंदित होता है ।
मुक्ति फल जैसा स्वाद नहीं, मुक्ति फल अनुभव होता है ।।चौबीसों ...

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति जिनेन्द्राय फलं निर्व. स्वाहा।

मद राग द्वेष को दूर किया, फिर मोह का जाला तोड़ा है ।
सब आधि-व्याधि से रहित आप, सारे जग से मुंह मोड़ा है ।।
कर्मों के पर्वत चूर किये, निज से ही नाता जोड़ा है ।
श्रद्धा से अर्घ्य बना लाये, हमने निज मोह मरोड़ा है ।।चौबीसों ...

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

जयमाला

दोहा

ज्ञानावरण नाश कर, केवल ज्ञान को पाये ।
अनंत चतुष्टय के धनी, शत्-शत् शीश झुकाये ।।
समवशरण वैभव महा, चौबीसों जिनराय ।
मूलगुण छ्यालीस हैं, नमूं तुम्हारे पाये ।।

पद्धरि छंद

सुंदर शरीर रचना महान, जन्मत ही दस अतिशय प्रमान ।
ज्यों जन्म लेय सौधर्म आये, ऐरावत हाथी पर बिठाये ।।1।।
पांडुक वन में अभिषेक किया, सबने सुख अमृत पान किया ।
तन वज्रमयी पाया शरीर, है रूधिर श्वेत बहता है क्षीर ।।2।।
सम चतुरस्त्र संस्थान पाये, तन पर न पसीना जरा आये ।
तन उड़ती है शुभ गंध ज्ञान, इक सहस आठ लक्षण बखान ।।3।।
हित मित प्रिय वच अमृत गिराये, शक्ती अनंत तन में जु आये ।
दश अतिशय जन्मत होत होय, भक्तों के जो सब करम खोय ।।4।।
ज्यों केवलज्ञान का दीप जले, त्यों दश अतिशय की हवा चले ।

सौ कोश न हो दुर्भिक्ष कहीं, फिर मंद-मंद भी पवन बही ।।5।।
जीवों का वध भी नहीं होय, आहार न ले जिनवर भी कोए ।
अब होगा न उपसर्ग कभी, चारों दिश में मुख दिखे सही ।।6।।
ईश्वर विद्या के हुये आप, तन छाया रहित हम करें जाप ।
विद्याओं ने ईश्वर माना, तन छाया ने छोड़ा बाना ।।7।।
पल-पल में पलक न उठे-गिरे, नख केश भी अब तो नाहीं बढ़े ।
दश अतिशय केवल ज्ञान पाएं, चौदह देवों कृत है बनाएं ।।8।।
भाषा है अर्द्धमागधी जान, मैत्री आई जीवों के प्राण ।
सारी ऋतुओं फल एक साथ, दर्पण बन पृथ्वी भयी पाथ ।।9।।
सब जीवों को आनंद होय, वायु में गंध सुगंध होय ।
पथ से कांटे अरू धूल हटी, गंधोदक बरसे मेघ छटी ।।10।।
चरणों तल पंकज को रचाये, द्वि सहस द्वि पंच कमलों को लाये ।
देवों ने जय-जयकार करी, वाणी में सबके क्षमा भरी ।।11।।
आगे-आगे यह धर्म चक्र, है चौदह अतिशय देवकृत्य ।
अठ प्रातिहार्य भी साथ रहे, प्रभु की शोभा को बढ़ा रहे ।।12।।
सब शोक नष्ट करता अशोक, नभ से वृष्टी पुष्पों की थोक ।

वाणी की अमृत धार बहे, जय चौसठ चमर ढुराय रहे ।।13।।
रत्नों से खचित सिंहासन है, जय भामंडल का भासन है ।
गंभीर नाद दुंदुभि होय, सर छत्र तीन शोभित ये होय ।।14।।
अठ प्रातिहार्य शोभा को पाये, जय अनंत चतुष्टय सुनो गाय ।
अंतर अनंत का ज्ञान हुआ, उस ज्ञान ने लोका लोक छुआ ।।15।।
दर्शन पाया तुमने अनंत, जीवों को दिखाया मुक्ति पंथ ।
पाया है सौख्य हो आतम का, जिन ध्यान लगा परमातम का ।।16।।
शक्ति अनंत के बने वीर, कर्मों पर अपना चला तीर ।
दश-दश चौदह वसु चार जान, छ्यालीस मूलगुण हैं प्रमाण ।।17।।
ऐसे प्रभु की हम भक्ति करें, तप त्याग क्षमा से धर्म धरे ।
किरपा कीजे मोहि दीन जान, 'स्वस्ति' ने पकड़े चरण आन ।।18।।

दोहा **मूलगुण छ्यालीस की, सुंदर माल बनाय ।**
भविजन कंठ में धारिये, शत्-शत् शीश नवाय ।।
समोवशरण सु विधान को, भाव सहित करवाय ।
मुक्ति सुख समृद्धि हो, शत्-शत् शीश झुकाए ।।

परि पुष्पांजलि क्षिपेत्

मानस्तम्भ संबंधि सोपान वर्णन

दोहा

विजय द्वार पूरब दिशा, अतिशय सुन्दर जान ।
चौक आगे सोपान है, जपूं तुम्हारा नाम ।।

ॐ ह्रीं पूर्व दिशायां विजय नामक द्वाराग्रे विद्यमान चतुष्कस्याग्रे सोपानसंयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।1।

वैजयन्त है हार सम, है जयन्त गुणगान ।
कर प्रवेश जिनवास में, करते चरण प्रणाम ।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिक्ष चतुर्णां द्वाराणाम् अग्रे चतुष्कस्याग्रे चतुः सोपानसंयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।2।

ऋषभ देव जिनागार में, सीढ़ी बीस हजार ।
एक हस्त ऊँची कही, नमूं मैं बारंबार ।।
समोवशरण तेईस का, क्रम-क्रम घटता जाये ।
हीरा मणि मुक्ता लड़ी, शोभा कही न जाये ।।

ॐ ह्रीं श्रीऋषभदेवस्य विंशतिसहस्त्रहस्तोच्च-एकहस्तायत- एककोश लम्ब सोपानसंयुक्त-समवसरणस्थित

जिनेन्द्राय अर्घ्यं।3।

चार हस्त का इक धनु, हाथ हैं बीस हजार ।
ऊँचा पंच सहस्त्र है, समवशरण तैयार ।।

ॐ ह्रीं अन्तिमत्रयोविंशति तीर्थंकराणां यथाविधिहीनहीन सोपानसंयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।4।

दोनों ओर सीढ़ी बनी, वेदी सुन्दर जान ।
भक्ति भाव से समभाव से, चरणन करूं प्रणाम ।।

ॐ ह्रीं चतुर्हस्तानाम् एकं धनुर्मत्वा मध्यभूमितः पंचसहस्त्रधनुः प्रमाणोच्च समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।5।

रतनमयी वेदी बनी, बैठक सुन्दर जान ।
समवशरण शोभा बढ़े, प्रभु का हो गुणगान ।।

ॐ ह्रीं श्रीऋषभदेवस्य सार्धसप्तशतधनुःस्थूल सोपान वेदिकासंयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।6।

(गीता छंद)

वेदी शोभा है बढ़ाती, देख प्रभु भक्ति बढ़े ।
है कमल पांखुरी खूब सुंदर, देव दर्श को हैं खड़े ।।
शुभ ज्योति जगमग हो रही, सुख पा रहे सब जीव हैं ।
सात शत पंचाशतों का, धनुष प्रमाण अतीव है ।।

ॐ ह्रीं वेदिकायाः नानाविधरचनासम्पन्नचतुष्के पीठसंयुक्त- समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।7।

यत्र छत्र जहां लगा है, छाया प्रभु पर शोभती ।
गोल कलशा गोल जिनगृह, स्वयं शोभा बोलती ।।
मन:थम्भ सहित है विष्ठर, यह प्रथम ही आवता ।
जिनराज की भक्ति करे वो, मोक्ष पद को पावता ।।

ॐ ह्रीं वेदिकोपरि मूलविषें सूची 750 धनुष, ऊपर चूलिकास्थल में लघुसूचीप्रमाण गोलाकार कूट पर स्थित देवीदेवकृत जिनगुणगानसंयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।8।

द्वितीय बैठक द्वार चतु है, स्वर्ण के रत्नों जड़े ।
पर प्रभु की शोभा लख के, ये सभी फीके पड़े ।।
भक्तों की ये जब भावना, स्वीकार प्रभु जी कीजिये ।
हम नैन नीचे करके बैठे, दृष्टि हम पर दीजिये ।।

ॐ ह्रीं ऊपरि कलशयुक्त छत्रिकायुक्त अधः स्तम्भसहित प्रथमविष्ठरसंयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।9।

द्वार वसु सुंदर बताये, खम्भा भी वसु जानिये ।
तीन गुमठी ग्यारा कलशा, प्रभु की आज्ञा मानिये ।।
इन्द्र की आज्ञा मिली तब, जिन महल तैयार है ।

स्वर्ग का वैभव है आया, प्रभु चरण से प्यार है ।।

ॐ ह्रीं पूर्व दो दिशाओं में आमने-सामने तीन-तीन द्वार तथा दो दिशाओं में बीचों-बीच आमने-सामने द्वारयुक्त द्वितीयविष्ठरसंयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।10।

(चौपाई)

बैठक में बैठे हैं जिनवर, मूरत सूरत प्यारी मनहर ।
जिनकी शोभा वरणी न जाये, गणधर इन्द्र भी शीश झुकाएं ।।

ॐ ह्रीं आठ आठ स्तम्भयुक्त 3।3 गुमठियों के ऊपर 11।11 कलशयुक्त 8।8 द्वारयुक्तवेदिकासंयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।11।

पंच सहस ऊँचा बरसावे, बैठक मणिमय लख हर्षावे ।
प्रथम भूमि में विजय-द्वार है, चार चौक शोभा अपार है ।।

ॐ ह्रीं वेदिकोपरि बहुविष्ठरसंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।12।

चार चौक चांदी बरसावे, बैठक मणिमय लख हर्षाते ।
मध्य जनों तर चौक विपुल है, चित्र बने सुकुमाल सुकुल है ।।

ॐ ह्रीं समभूमितः पंचसहस्त्रचापोन्नत विजयद्वारस्य अग्रे चतुष्क (चौक) संयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।13।

पद्धरि छंद

भक्तिमय सारा देश हुआ, भक्तों ने आतम सौख्य लिया ।

सब देव देवियां नृत्य करे, प्रभु के सिर पर शुभ चमर ढुरे ।।

ॐ ह्रीं चतुष्कस्याग्रे पार्श्वद्वये विष्ठरेषु मध्ये नानाविधरचनायुक्त चतुष्कसंयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।14।

द्वारे पे बंधन वार बांधे, रत्नों की माल से द्वार सजे ।
चहुं ओर ध्वजा फहराय गई, भक्तों के मन को भाय गई ।।

ॐ ह्रीं बैठक विष्ठर सोपानवेदिकामत्तवारणावारक शोभासंयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।15।

देवों ने तव यशगान किया, नर नारी ज्ञान बखान किया ।
झूमे नाचे वे नृत्य करें, हर अंग-अंग से भक्ति झरे ।।

ॐ ह्रीं रत्नमुक्तानिर्मित सकम्पबहुध्वजासंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।16।

सीढ़ी पर चढ़ नहि थकते हैं, नहि देर जरा भी करते हैं ।
अतिशय यह देवों कृत होता, दर्शन कर कर्मों को खोता ।।

ॐ ह्रीं पूर्वोत शोभासम्पन्नविष्ठरेषु देवीदेवनरनारीकृत जिनराज गुणगानसंयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।17।

आदि का बारह योजन था, अंतिम योजन बस एक रहा ।
तेईस का क्रम-क्रम से घटता, निर्मल शिव वैभव खूब वहां ।।

ॐ ह्रीं जिनातिशयतः यत्सोपानानि खेदं बिना क्षणमात्र चटनसमर्थानि एवम्भूतनीलमणि-निर्मित द्वादशयोजनवर्तुलशिला संयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।18।

है गोल-गोल शुभ समवशरण, फिर आया धूली साल कोट ।
आया जो प्रभु के चरणों है, भागे सब उसके रोग शोक ।।

ॐ ह्रीं अन्तिमत्रयोविंशतितीर्थंकराणाम् उत्तोत्तरहीनरचना परिणाम विशिष्टशिलासंयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।19।

रतनन का चूरा इन्द्रों ने, वह इन्द्रधनुष की कांति धरे ।
काला पीला रंग पंचवर्ण, इससे बैठक में चौंक पुरे ।।

ॐ ह्रीं पंचविधचूर्णनिर्मित-गगनविसारिज्योतिर्युक्त धूलिसाल दुर्गसंयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।20।

प्रभु के वपु से चौगुना ऊंचा, है कोट वहां का होता है ।
दो भाग मोटी वह हो करके, कर्मों के पर्वत खोता है ।।

ॐ ह्रीं जिनशरीरतः चतुर्गुणोच्च-मूलभागद्वयस्थूल उपरिक्रमशः सूक्ष्मधूलिसालदुर्ग (कोट) संयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।21।

है चार द्वार और चार कोट, वैजयन्त जयन्त है आदि करे ।
कंगूरा उन पर शोभित है, आते-जाते सब भव्य रहे ।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिक्ष कंगूरागुरजबैठकसंयुक्त चतुद्वरिसहित धूलि- सालदुर्ग (कोट) संयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।22।

तीनों लोगों के चित्र बने, लख वहां भव्य शिक्षा लेते ।
नरकों का रस्ता तज करके, मुक्ती की राह पकड़ लेते ।।

ॐ ह्रीं नानाविधिचित्रावलिसंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।23।

है गली चार सीढ़ी संग में, मणियों की शिला वहां शोभे ।
देवों की यह सुंदर रचना, भव्यों का अति ही मन मोहे ।।

ॐ ह्रीं वृषभदेव क्रोशैकायतत्रयोविंशति तिक्रोशलम्बासु सोपानचतुर्गलिषु उभयतः स्फटिकमणिमयवेदिका संयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।24।

दोहा हर वेदी के बीच में, चौड़ा है स्थान ।
जिनवर की पूजा करें, बारंबार प्रणाम ।।

ॐ ह्रीं अन्तिमत्रयोविंशतितीर्थंकराणाम् यथागमक्रमहीन वेदिका संयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।25।

अडिल्ल छंद

सुंदर भाव हुये प्रभु के दर्श से । मन भी पावन हुआ प्रभु स्पर्श से ।।
लम्बी वेदी गली एक सी जानना । तेईस की क्रम-क्रम से हानि मानना ।।

ॐ ह्रीं चतुर्वीथिकानांमध्ये अन्तरालभूमौ चतुर्णां दुर्गाणां पंचानां वेदिकानाम् अन्तरालेऽष्टानां भूमिशिलानां पर्यन्ते धूलिशालदुर्ग संयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।26।

समवशरण की अष्ट भूमि को जानिये । सबसे अंत में धूलिसाल को मानिये ।।

चार गली के मध्य चतु अंतर हुआ । हुआ उसे शुभ ज्ञान जिन्हों अंतर छुआ ।।

ॐ ह्रीं जिनदेहाच्चतुर्गुणोच्च भित्तिकासमसमायत पंचवेदिकाभिः उपर्युपरि क्रमहीनायाम तथोच्चदुर्गेश्च संयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।27।

कोट के नीचे बनी मनोहर वेदिका । कोट चौगुना रूप आपका शोभता ।।
मैं भी दर्श करूं यही है भावना । जागे आतम ज्ञान यही है कामना ।।

ॐ ह्रीं कंगूरा मन्दिर ध्वजा सुशोभिताभिः कंचनवर्णपंचवेदिकाभि संयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।28।

स्वर्णमयी है वेदी औ मणियों भरी । कंगूरों से शोभा उसकी औ बढ़ी ।।
ध्वज फहराकर गीत धर्म के गावते । दर्शन करने प्रभु के नित हम आवते ।।

ॐ ह्रीं पंचवेदिका-चतुर्दुर्गाष्टान्तरालेषु नानाविधिचित्ररचना संयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।29।

शंभु छंद

शुभ समवशरण में वसुभूमि, शोभा को और बढ़ाती है ।
भू चैत्य खातिका पुष्प वाटिका, पवनों से लहराती है ।।
उपवन ध्वजा औ कल्पवृक्ष से, मनवांछित फल पाते हैं ।
अष्टम भू में सभा प्रभु की, ज्ञानामृत बरसाते ।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिक्ष चतुर्दुर्ग-पंचवेदिका-षट्त्रिंशद्द्वार संयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।30।

(दोहा)

चार कोट के मध्य में, पंच वेदिका जान । अतिशय ज्ञान की धार है, बारंबार प्रणाम ।।
पंच वेदी चतु कोट है, नवद्वारों को जान । चतु दिश में छत्तीस है, करते तुम्हें प्रणाम ।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिक्ष चतुर्दुर्ग-पंचवेदिका-षट्त्रिंशद्द्वार संयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।31।

प्रथम कोट वेदी प्रथम, प्रथम गली में द्वार ।
प्रथम की पूजा प्रथम में, प्रथम मुक्ति का द्वार ।।

ॐ ह्रीं प्रथमदुर्ग-प्रथमवेदिकाद्वाराणां मध्ये प्रथमवीथिकाभूमि भिन्नद्वाराणां मध्ये द्वितीयादिवीथिकाभूमि-संयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।32।

अष्ट भूमि आठों गली, पार्श्व वेदिका सार ।
हीरों के वे द्वार हैं, शोभा अपरंपार ।।

ॐ ह्रीं अष्टभूमिसम्बन्धिनोनाम् अष्टवीथिकानाम् उभयपार्श्वे अनेकबज्रमय-कपाटयुक्त स्फटिकनिर्मित वेदिकाद्वारसंयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।33।

तिन गलियों की वेदी में, मानुष दर्श करेय ।
बैठक में बैठें वहां, भक्ति कर्म हरेय ।।

ॐ ह्रीं आभ्यान्तरबीथिकाद्वारसंयुक्त -समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।34।

धूली कंचन मणिमयी, दरवाजे हैं चार ।
जगमग-जगमग होत है, झलके ज्ञान का सार ।।

ॐ ह्रीं स्वर्णमयचतुःद्वारयुक्तधूलिशालदुर्गसंयुक्त- समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।35।

दोय कोट चतु वेदी हैं, दरवाजे चौबीस ।
श्वेत रंग के सब कहे, नित्य झुकाऊं शीश ।।

ॐ ह्रीं रौप्यमयचतुर्विंशतिद्वारयुक्त दुर्गद्वय संयुक्त- समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।36।

फटिक मणि के कोट में, आठ बने हैं द्वार ।
हरित रंग के द्वार हैं, दर्शन हैं सुखकार ।।

ॐ ह्रीं स्फटिकमयदुर्गद्वाराभ्यन्तरवेदिकाष्टद्वारहरिद्वर्णकपाट संयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।37।

जिन तनु से बारह गुने, द्वार वहां छत्तीस ।
चौड़े जिन वपु चौगुने, तुम्हें झुकाऊँ शीश ।।

ॐ ह्रीं श्रीजिनदेहतः द्वादशगुणितोच्च-चतुर्गुणायतषट्त्रिंशद् द्वारसंयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।38।

बैठक में सब बैठ के, भक्ति करें जिनदेव ।
नहि दूसरा काम है, करें आपकी सेव ।।

ॐ ह्रीं द्वाराणाम् उभयपार्श्वे मुकुटयुक्तविष्टरसंयुक्त- समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।39।

खम्भा ऊपर गुमठी है, छोटी-छोटी जान ।
ऊपर कलशा ध्वज रहे, जपूं आपका नाम ।।

ॐ ह्रीं जिनगुणगायकदेवीदेवविभूषितः क्षुद्रघण्टिकायुक्तानेक गुमटी विशिष्टद्वारसंयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।40।

रत्नमयी तोरण वहां, रतनन पुष्प की माल ।
घंटी की पंकति बनी, तुम्हें झुकाऊँ भाल ।।

ॐ ह्रीं विविधरत्नमाल-पुष्पमाल-क्षुद्रघण्टिका-पंक्तियुतद्वार संयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।41।

चित्र बने हैं द्वार पर, जगमग ज्योत जगाय ।
सुरनर इनको देख के, मन में अति हर्षाय ।।

ॐ ह्रीं विविधरचनायुक्तद्वार संयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।42।

शंभू छंद

नव द्वारों में है द्वार पाल, त्रिद्वार में ज्योतिष है ठाड़े ।
दो द्वार में व्यंतर वासी हैं, दो में भवनों वाले ठाड़े ।।
वे गदा धरे हैं गर्दन पर, कल्पों के वासी द्वार खड़े ।
यद्यपि आवश्यक न होते, इनसे वैभव और कांति बढ़े ।।

ॐ ह्रीं विविधानेकद्वारपाल संयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।43।

मंगलमय मंगल द्रव्य धरे, मंगल जीवन सबका करते ।
है छत्र चमर झारी कलशा, ध्वज पंखा ठोना को धरते ।।
दर्पण में अर्पण कर दीना, प्रभु चरणों का ही ध्यान रहे ।
ये एक सौ अठ हर जगह रहे, इनकी गिनती मुनिराज कहे ।।

ॐ ह्रीं एकलक्षवयुविंशतिसहस्त्रचतुःशतषोडशमंगलद्रव्य विभूषित षट्त्रिंशद्द्वार संयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।44।

(दोहा) पांडु काल महाकाल ये, पिंगल पद्म है मान ।
रत्न शंख नैसर्प है, बारंबार प्रणाम ।।

ॐ ह्रीं एकलक्षोनचत्वारिंशत्सहस्त्रनवशताष्टासीति निधियुक्त- षट् त्रिंशद्द्वारसंयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।45।

शेर चाल (दीन बन्धु.....)

जिनवर चरण में आके निधि सौख्य है देती । नर देव पशु मानवों की सेवा वो करती ।।
वे अन्न वस्त्र आयुध औ गहने भी देती । बर्तन दिये बाजे दिये, गुणगान भी करती ।।
वे रत्न दे शस्त्र दे महलों को भी देती । आकार है गाड़ी बना वे कुछ नहीं लेती ।।
गणधर ऋषि मुनि भी जाके राजते वहां । सब जानते हैं किन्तु सौख्य लेते न जरा ।।
भक्ति में भक्त आके तुम्हें, शीश झुकाते । निधियां हैं कितनी गणधर जी गिनती बताते ।।

ॐ ह्रीं गगनव्यापकधूम्रघटायुक्तधूपघटयुक्तद्वार संयुक्त- समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।46।

छत्तीस द्वार सुन्दर हैं एक दिशा में । चऊ एक सौ चालीस हैं मिल चार दिशा में ।।
परदा लगे है स्वर्ण औ कंचन मणिमयी । घट धूप के ऊपर रखे, सौगंध है भयी ।।
मेघों की घटा छाय गई धूम है इतना । उठ के चली आकाश में उसे चन्द्र से मिलना ।।

शुभ वास को पा करके वहां, भौंरे झूमते । भक्ति में भक्त डोल के दुःखों को भूलते ।।

ॐ ह्रीं प्रथमतुर्यषष्ठ्वीथिकानाम् अन्तराले नृत्याले नृत्यशाला युक्तपार्श्वसंयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।47।

प्रभु वाणी सुन के कर्म धुआं ऐसे ही उड़ता ।
निज चेतना का हो विकास जाती है जड़ता ।।

ॐ ह्रीं षोडशनृत्यशालासहित चतुर्दिशाचतुर्द्वार संयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।48।

प्रथम गली चतुर्थ गली छटवी गली में । अंतर में नृत्य शाला सुन्दर होती गली में ।।
देवांगना हर पल वहां वे नाचती रहती । गुणगान वे हरपल करें पर वे नहीं थकतीं ।।

ॐ ह्रीं कल्पवासिनी नत्ययुक्त चतुर्थान्तरवीथिकायाम् पूर्ववत् नत्यशालासंयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।49।

अध्यात्म ज्ञान लोक ज्ञान मन वहां रमे । जिनवास है जहां पे वहां ध्यान में जमें ।।
है चार दिश में चार-चार नृत्य शालायें । भवनों की है ये देवियां पहनी हैं मालायें ।।
इक नृत्य शाल में बत्तीस नृत्य करें हैं । प्रभु ध्यान में हो करके लीन पाप हरे हैं ।।
चौथी गली में कल्पवासिनी है नाचती । है नृत्य शाला पूर्ववत् हो करके जांचती ।।
कर-करके नृत्य भक्ति में वे होती लीन हैं । परिणाम है निर्मल वहां न मन मलिन है ।।

ॐ ह्रीं द्वात्रिंशत् नृत्यशालायुक्तषष्ठान्तरवीथिका संयुक्त- समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।50।

पूर्व दिशा मानस्तम्भ संबंधी पूजन

स्थापना

शंभु छंद

जिन वीतराग सर्वज्ञ प्रभु, यह अन्तर आतम ज्ञानी हैं ।
हैं दोष अठारह रहित प्रभु, निज में निज के ध्यानी हैं ।।
जग छोड़ा है सुख पाया है, संसार तुम्हें जिनवर कहता ।
अन्तर में आओ हे जिनवर, तुम सम बनने पूजा करता ।।

ॐ ह्रीं पूर्व दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्र अत्र अवतर अवतर संवौषट आह्वानन, अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनं, अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणं।

तर्ज- चौबीसी पूजन

धोया तन जल से खूब, तन न स्वच्छ हुआ ।
हो जन्म, जरा, मृत्यु, नाश, जल का कलश लिया ।
पूरब दिश मान स्तम्भ, भक्ति नित्य करें ।
हो मान रहित मम ज्ञान, ऐसे भाव धरें ।।

ॐ ह्रीं पूर्व दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो जलं निर्व. स्वाहा।

बांधू चिन्ता में कर्म, अग्नि सम जलता ।
चन्दन से पूजूं नाथ, पाऊँ शीतलता ।। पूरब...

ॐ ह्रीं पूर्व दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो चन्दनं निर्व. स्वाहा।

दुखड़े पाये गति चार, सुख पद ना पाया ।
अक्षत लेकर के नाथ, चरणों में आया ।। पूरब...

ॐ ह्रीं पूर्व दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो अक्षतं निर्व. स्वाहा।

ये राग भाव भगवान, कर्म कराते हैं ।
छूटूं इनसे हे नाथ, पुष्प चढ़ाते हैं ।।पूरब...

ॐ ह्रीं पूर्व दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो पुष्पं निर्व. स्वाहा।

चारों गति खाया खूब, पर न पेट भरा ।
नैवेद्य समर्पित आज, काटो कर्म जरा ।।पूरब...

ॐ ह्रीं पूर्व दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो नैवेद्यं निर्व. स्वाहा।

केवलज्ञानी हो नाथ, ज्ञान ही उजियारा ।
हाथों में लाया दीप, कर्मों का हारा ।। पूरब...

ॐ ह्रीं पूर्व दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो दीपं निर्व. स्वाहा।

काया को रहा संवार, आतम भूल गया ।
अग्नि में खेऊं धूप, दर्शन आज हुआ ।।
पूरब दिश मान स्तम्भ, भक्ति नित्य करें ।
हो मान रहित मम ज्ञान, ऐसे भाव धरें ।।

ॐ ह्रीं पूर्व दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो धूपं निर्व. स्वाहा।

ठग है सारा संसार, मुझको लूट लिया ।
फल पाने फल हम लाये, हर्षित आज जिया ।। पूरब...

ॐ ह्रीं पूर्व दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो फलं निर्व. स्वाहा।

तेरी छाया में बैठ, भक्ति हम करते ।
ले अष्ट द्रव्य का थाल, पूजा नित करते ।।
पूरब दिश मान स्तम्भ, भक्ति नित्य करें ।
हो मान रहित मम ज्ञान, ऐसे भाव धरें ।।

ॐ ह्रीं पूर्व दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

उत्तर दिशा मानस्तम्भ संबंधी पूजन

स्थापना शंभु छंद

अध्यातम अनुभव मानव को, प्रभु का दर्शन ही देता है ।
अध्यातम शांति जब आये, मानव चिन्ता को खोता है ।।
मानस्तम्भों के दर्शन से, ही अभिमान मान खण्डित होता ।
अतिशय कारी प्रभु का दर्शन, भक्तों की झोली भर देता ।।

ॐ ह्रीं उत्तर दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्र अत्र अवतर अवतर संवौषट आह्वानन, अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनं, अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणं।

(तर्ज : नीर गंध अक्षतान् .....)

विश्व शान्ति आत्म शान्त, हो त्रिलोक में सदा ।
कर्म मैल भी धुले, जीव पायेंगे मुदा ।।
जिन महल मानथंभ, मान को गलायेगा ।
भव्य दर्श लेयकर, मोक्ष पथ को पायेगा ।।

ॐ ह्रीं उत्तर दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो जलं निर्व. स्वाहा।

ईर्ष्या से आत्मदाह, क्रोध भी जलावता ।
चंदनादि लेयकर, चर्ण में चढ़ावता ।। जिन....

ॐ ह्रीं उत्तर दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो चन्दनं निर्व. स्वाहा।

अक्षतों से पूजता मैं, जन्म न हो फिर मेरा ।
अक्षतों की सम्पत्ति पे, वास प्रभु है तेरा ।। जिन....

ॐ ह्रीं उत्तर दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो अक्षतं निर्व. स्वाहा।

रूप रंग पुष्प का, जीव को लुभावता ।
छूटने को काम से, पुष्प मैं चढ़ावता ।। जिन....

ॐ ह्रीं उत्तर दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो पुष्पं निर्व. स्वाहा।

भूख की जो औषधि, आप ने वो खायी है ।
मेरी क्षुधा भी नशे, भावना ये भायी है ।। जिन....

ॐ ह्रीं उत्तरदिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो नैवेद्यं निर्व. स्वाहा।

भ्रमण भ्रमित होके करे, राह नाही सूझती ।

दीप चर्ण में धरूं, प्रभु चरण को पूजती ।।
जिन महल है मानथंभ, मान को गलायेगा ।
भव्य दर्श लेयकर, मोक्ष पथ को पायेगा ।।

ॐ ह्रीं उत्तर दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो दीपं निर्व. स्वाहा।

विकृति ने प्रकृति को, फल से दूर है रखा ।
मुक्ति फल मुझे मिले, हो ध्यान में मेरा सखा ।। जिन....

ॐ ह्रीं उत्तर दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो धूपं निर्व. स्वाहा।

कल्पवृक्ष आप हो, आप ही चिन्तामणि ।
कर्म मेघ छाये रहे, आप हो आतम धनी ।। जिन....

ॐ ह्रीं उत्तर दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो फलं निर्व. स्वाहा।

प्रेम की वेदी बना, आत्मा बिठा दिया ।
अर्घ्य से मैं पूजता, हर्ष मय मेरा जिया ।। जिन....

ॐ ह्रीं उत्तर दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

दक्षिण दिशा मानस्तम्भ संबंधी पूजन

स्थापना

त्रिभंगी छन्द

अरिहन्त नमन कर, आत्म चमन कर, समवशरण पूजा करते ।
मुक्तिकी राहें, धर्म की चाहें, कर्मगिरि को सब हरते ।।
प्रभु न लौटेंगे, मुक्त रहेंगे, ध्या भावों को शुद्ध करें ।
हिरदय कमलासन, प्रभु का शासन, बारम्बार प्रणाम करें ।।

ॐ ह्रीं दक्षिण दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्र अत्र अवतर अवतर संवौषट आह्वानन, अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनं, अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणं।

चाल : सोलहकारण पूजा

जल का कलशा लेकर आए, भावों से हम पूज रचाएं ।
श्री जिनराज, पूरण होते सारे काज ।।
दक्षिण दिश के मानस्तम्भ, बारम्बार मैं करूं नमन ।

श्री जिनराज, पूरण होवें सारे काज ।।

ॐ ह्रीं दक्षिण दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो जलं निर्व. स्वाहा।

चन्दन है शीतलता दाय, मन मेरा शीतल हो जाए ।
श्री जिनराज, पूरण होते सारे काज.....

ॐ ह्रीं दक्षिण दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो चन्दनं निर्व. स्वाहा।

अक्षय पद को अक्षत लाए, स्थिर मन मेरा हो जाए ।
श्री जिनराज, पूरण होते सारे काज.....

ॐ ह्रीं दक्षिण दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो अक्षतं निर्व. स्वाहा।

पुष्पों की थाली भर लाए, राग भाव से मन हट जाए ।
श्री जिनराज, पूरण होते सारे काज.....

ॐ ह्रीं दक्षिण दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो पुष्पं निर्व. स्वाहा।

चरू मैं पूजन कारण लाए, भोजन नहीं भूख मिट जाए
श्री जिनराज, पूरण होते सारे काज ।।

ॐ ह्रीं दक्षिण दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो नैवेद्यं निर्व. स्वाहा।

जगमग अन्तर दीप जगायें, पूजन को दीपक ले आए ।
श्री जिनराज, पूरण होते सारे काज ।।
दक्षिण दिश के मानस्तम्भ, बारम्बार मैं करूं नमन ।
श्री जिनराज, पूरण होते सारे काज ।।

ॐ ह्रीं दक्षिण दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो दीपं निर्व. स्वाहा।

अग्नि मांही धूप चढ़ाएं, अष्टकर्म का धुआं उड़ाएं ।
श्री जिनराज, पूरण होते सारे काज.....

ॐ ह्रीं दक्षिण दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो धूपं निर्व. स्वाहा।

फल लेकर हम चरण में आये, मृत्यु नहीं मोक्ष को पाये ।
श्री जिनराज, पूरण होते सारे काज.....

ॐ ह्रीं दक्षिण दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो फलं निर्व. स्वाहा।

अर्घ्यों का हम थाल सजाए, मुक्ति महल की सेज दिलाय ।
श्री जिनराज, पूरण होते सारे काज.....

ॐ ह्रीं दक्षिण दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

पश्चिम दिशा मानस्तम्भ संबंधी पूजन

स्थापना

त्रिभंगी छंद

गति चार घुमाया, कष्ट दिलाया, कर्म दुष्ट पीड़ा देते ।
करूणा को तरसा, धर्म न बरसा, ज्ञान मेरा सब हर लेते ।।
तेरी ख्याति सुनकर, नाम को जपकर, पूजा को हम आए हैं ।
भटकूं न वन-वन, पाऊं उपवन, चरणों में शीश झुकाये हैं ।।

ॐ ह्रीं पश्चिम दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्र अत्र अवतर अवतर संवौषट आह्वानन, अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनं, अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणं।

चौपाई

जलता-जलता मैं आया हूं, जल झारी में भर लाया हूं ।
तन मन मेरा शुद्ध कर देना, पीड़ा मेरी सब हर लेना ।।
पश्चिम दिश में मानस्तम्भ है, समवशरण में चमन-चमन है ।
भावों से हम पूज रचाये, पूजन समवशरण कर आये ।।

ॐ ह्रीं पश्चिम दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो जलं निर्व. स्वाहा।
नन्दन को चन्दन अर्पण है, वीतरागता जिन दर्पण है ।
चन्दन तन की दाह मिटाये, पूजा कर शीतल हो जाये ।।
पश्चिम दिश में मानस्तम्भ है, समवशरण में चमन-चमन है ।
भावों से हम पूज रचाये, पूजन समवशरण कर आये ।।
ॐ ह्रीं पश्चिम दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो चन्दनं निर्व. स्वाहा।
रहती मुझको पद अभिलाषा, समझी न अक्षत की भाषा ।
पूजा को अक्षत ले आये, अक्षय पद जो शीघ्र दिलाये ।। पश्चिम..
ॐ ह्रीं पश्चिम दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो अक्षतं निर्व. स्वाहा।
पुष्पों ने जीवन उलझाया, इसमें सार कहीं न पाया ।
पुष्पों से पूजा हम करते, काम वासना को जो हरते ।। पश्चिम..
ॐ ह्रीं पश्चिम दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो पुष्पं निर्व. स्वाहा।
भूखा उदर है दीन बनाता, चारों गति में हर पल खाता ।
मैं नैवेद्य की थाली लाया, तुमसा कोई और न पाया ।। पश्चिम..
ॐ ह्रीं पश्चिम दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो नैवेद्यं निर्व. स्वाहा।

अंधियारा बाहर जब होवे, दीप जला हम तम को खोवें ।
अन्दर में उजियारा कर दो, दीप चढ़ाये ज्योति भर दो ।। पश्चिम..

ॐ ह्रीं पश्चिम दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो दीपं निर्व. स्वाहा।

काटा प्रभु कर्मों को तुमने, छांटा प्रभु कर्मों को तुमने ।
कर्म बंध हम खूब करायें, अब चरणों में धूप चढ़ायें ।। पश्चिम..

ॐ ह्रीं पश्चिम दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो धूपं निर्व. स्वाहा।

जग के जंजालों में फंसते, पाप कर्म को करके हंसते ।
पर न फल को हमने जाना, फल अर्पित है तुमको माना ।। पश्चिम..

ॐ ह्रीं पश्चिम दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो फलं निर्व. स्वाहा।

जैसे सूरज ढल जाता है, जैसे हिम भी गल जाता है ।
वैसा जीवन है प्रभु मेरा, अर्घ्य समर्पित करो बसेरा ।।
पश्चिम दिश में मानस्तम्भ है, समवशरण में चमन-चमन है ।
भावों से हम पूज रचाये, पूजन समवशरण कर आये ।।

ॐ ह्रीं पश्चिम दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

जयमाला

सुंदर हैं चारों दिशा, मानस्तम्भ हैं चार ।
जिन प्रतिमाएं राजती, दर्शन है सुखकार ।।

पद्धरि छंद

जय समवशरण महिमा अपार, भव्यों को करता है ये पार ।
नाना प्राणी जन दर्श लेय, मानी का मान ही तुम हरेय ।।
जग कर्मों का बन्धन रहता, कर्मों के दुःख को वह सहता ।
चारों गतियों में घूम रहे, गतियों में जाकर कष्ट सहे ।।
बन्धन बांधा तन को काटा, क्षण को न मिली मुझको साता ।
अब शरणा तेरे आये हैं, अब चरणा तेरे पाये हैं ।।
इन हाथों से पूजा करते, इन आंखों से दर्शन करते ।
अब पुण्य प्रबल मेरा जागा, मन तेरे चरणों में लागा ।।
शुभ समोशरण पूजा करता, पुण्यों से झोली मैं भरता ।
प्रभु ने आतम को पाया है, आतम में ध्यान लगाया है ।।
तव दर्श से आतम मैं पाऊं, आतम को पा मुक्ति जाऊं ।
जिनवर का महल तो सुन्दर है, जिसमें बैठे प्रभु अन्दर हैं ।।

चारों दिश में चतु मानस्तम्भ, दर्शन कर हो जाते हैं नम्र ।
नीचे से है चौकोर धार, हम करते इनको नमस्कार ।।
ऊपर हो जाए गोलाकार, दैदीप्तमान प्रतिमा निहार ।
है वज्रमयी, है फटिकमयी, दिपता सुंदर वैडूर्यमयी ।।
नन्दोत्तर आदि कही जान, सुन्दर-सुन्दर हैं इनके नाम ।
चहुं ओर वापिका चार जान, राजीव खिले मनहर महान ।।
उन पर भौंरे झूमे ऐसे, पृथ्वी में लगा अंजन जैसे ।
जय ध्वजा चमर है शोभ पाए, चारों दिश में वह लहलहाए ।
मानी जन आके मान जाए, मन की आकर शुद्धि करायें ।।
चारों दिश में सोलह वाणी, तिर जावे जो होवे पापी ।
चारों दिश में चतु प्रतिमा है, लखते जगती मन प्रतिभा है ।।
सुर-नर वंदन को आते हैं, नाचें गाते हर्षाते हैं ।
वसु-प्रातिहार्य शोभा बढ़ाये, प्राणीजन तुमको सिर नवाएं ।।
इससे ही मानस्तम्भ नाम, सुर-नर करते तुमको प्रणाम ।
वापी समीप है कुण्ड दोए, है स्वर्णमयी तव दर्श होए ।
जिन पूजा को जो भी आवे, पग धोकर के आनंद पावे ।

वापीजल से पूजा करेय, यह जन्म जरा मृत्यु हरेय ।
लटकी है रत्नों की माला, यह तोड़े कर्मों का जाला ।।
पूरब दिश का वर्णन कीना, दक्षिण दिश में ऐसे लीना ।
पश्चिम उत्तर सब एक जान, चहुं दिश में मानस्तम्भ मान ।।
जिनराज बहुत वैभवशाली, जिन महल के जिनवर है माली ।
भव्यों के फूल खिलाते हैं, मुक्ति से उन्हें मिलाते हैं ।।
"स्वस्ति" करती जिन नमस्कार, इस कर्म मान पर कर प्रहार ।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिक्सम्बन्धि मानस्तम्भ स्थित जिन प्रतिमाभ्यः पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

मानस्तम्भ के दर्श से, मान गलित हो जाये ।
विनय भाव आवे महा, मुक्ति से मिलवाये ।।

।। इत्याशीर्वाद पुष्पांजलि क्षिपेत ।।

प्रथम प्रासाद भूमि पूजा

चौपाई

प्रथम भूमि प्रासाद को जानो, गणधर कहे सहस्त्र प्रमानो ।।
भक्ति में हम पाठ रचायें, प्रभुवर के गुणगान को गायें ।
प्रथम कोट है वेदी प्रथम, दर्शन कर मन होता है नम ।
चैत्य भूमि भी बीच में होती, कर्मों के वह गिरि को खोती ।।

ॐ ह्रीं प्रथम गली द्वारोभयपार्श्वभागे अन्तर्गलीमध्ये चैत्यमन्दिरस्थ जिनेन्द्राय अर्घ्यं।1।

जिन मंदिर के आजू-बाजू, पांच-पांच मन्दिर को साजू ।
वायव अरू ईशान बताया, जिन भवनों में प्रभु को पाया ।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंदिशासु पंचपंचमन्दिरमध्य जिनमन्दिर संयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।2।

वलय व्यास को आप विचारो, वायव दिश में प्रभु निहारो ।
भक्ति का सुख ज्ञान में पाये, ज्ञानी आतम ध्यान लगायें ।

ॐ ह्रीं वायव्यदिशायां वलयव्यासयुक्तचैत्यभूमि सयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।3।

चैत्य भूमि में सुन्दर मन्दिर, तालवृक्ष बावड़ी है अन्दर ।
रचना देखत ही सुख पाये, देव-देवी विद्याधर आये ।।

ॐ ह्रीं चैत्यभूमिसरोवरवापिकासोपानविष्ठरसंयुक्त चैत्यमन्दिर स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।4।

सरस सरोवर सार वापिका, बनी बैठ के सुन्दर लतिका ।
सुन्दर सीढ़ी चढ़कर जाये, फिर जिनदेव के दर्शन पाये ।।

ॐ ह्रीं सरोवरवापिकातालवृक्षयुक्तचैत्यभूमिमन्दिरसंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।5।

वापी ऊपर छतरी छत है, चार खंभ होते अक्षत हैं ।
शिखर पे कलशा ध्वजा चढ़ाये, सुन्दर मन्दिर शोभा पाये ।।

ॐ ह्रीं वापिकायाः कोणस्थस्तम्भेषु शिखरध्वजाकलशयुक्तचैत्य मन्दिर स्थितजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।6।

सुन्दर घने वृक्ष लहराए, षट ऋतु के फलफूल भी लाये ।
जहां जिनेश्वर स्वयं विराजें, सरस ध्यान शोभा में राजे ।।

ॐ ह्रीं षड्ऋतु फलफूलयुक्त श्रेणीबद्धवृक्ष चैत्यमन्दिरस्थ जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।7।

उन वृक्षन की शाखा सुन्दर, मन्द पवन जिनवास है अन्दर ।
जहां प्रभु जी ध्यान लगायें, प्रकृति शोभा वहीं बढ़ायें ।।

ॐ ह्रीं अनेकशाखासहित वृक्षशोभितभूमि चैत्यमन्दिरस्थ जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।8।

वृक्षों नीचे शिला रखी है, चन्द्र कांतिसम वहीं दिखी है ।
संघ सहित मुनिवर हैं राजे, लख शोभा मस्तक झुक जावे ।।

ॐ ह्रीं चैत्यभूमिवृक्षतलेषु अनेकशिलासु दिगम्बरमुनिसमूहसहित चैत्यमन्दिरस्थ जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।9।

दया के सागर गुण मणि आगर, ज्ञान ध्यान को करे उजागर ।
चैत्य भूमि में ध्यान लगायें, दर्शन कर हम सुख को पाएं ।।

ॐ ह्रीं चैत्यभूमि दिगम्बर मुनिसंयुक्त चैत्यमन्दिरस्थजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।10।

ध्यान किया निज ज्ञान को पाया, जीवों को उपदेश सुनाया ।
ऐसे मुनिवर दर्शन देवे, भव सिन्धु की नाव को खेवें ।।

ॐ ह्रीं चैत्यभूमि शिलासु द्विविध धर्मोपदेशक दिगम्बरयति संयुक्त चैत्यमन्दिरस्थजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।11।

कर्म गिरि को नित्य गिराये, तप तपते वो ध्यान लगाये ।
प्रशम मूर्ति वैराग्य जगाये, वैरागी का ध्यान बढ़ाये ।।

ॐ ह्रीं चैत्य भूमि कर्मध्वंसक दिगम्बर यति संयुक्त चैत्य मन्दिर स्थजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।12।

स्वर्ण मयी रत्नों के द्वारा, द्वार पे सुन्दर वंदन वारा ।
महल गोख छज्जा है सुन्दर, वहां बने हैं मन्दिर सुन्दर ।।
शोभा इसकी हमें लुभाये, जिनवर दर्शन हम भी पायें ।

सुर-नर विद्याधर भी आते, लख शोभा सबही हर्षाते ।।

ॐ ह्रीं अनेक शोभा संयुक्त चैत्य भूमिस्थ पंच मन्दिरस्थ जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।13।

समोवशरण में चित्र बने हैं, कर्म घातिया आप हने हैं ।

चित्रों से भी शिक्षा पाते, अपना-अपना ज्ञान बढ़ाते ।।

ॐ ह्रीं अनेक रचनासंयुक्त चैत्य भूमि मन्दिरस्थ जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।15।

चैत्य भूमि पूजन

आग्नेय दिशा चैत्य भूमि मन्दिर जिन स्थापना

त्रिभंगी छन्द

आग्नेय दिशा में, कर्म नशाने, बिम्ब जिनालय राज रहे ।

पूजा करना है, दुख हरना है, आव्हानन का ताज रहे ।।

अथ आग्नेय दिशाचैत्यभूमिमन्दिर जिनस्थापना

नैऋत्य दिशा में कर्म नशाने, बिम्ब जिनालय राज रहे ।

पूजा करना है, दुख हरना है, आव्हानन का ताज रहे ।।

अथ नैर्ऋत्यदिशा चैत्यभूमिमन्दिर जिनस्थापना

वायव्य दिशा में कर्म नशाने, बिम्ब जिनालय राज रहे ।
पूजा करना है, दुख हरना है, आव्हानन का ताज रहे ।।

अथ वायव्य दिशाचैत्यभूमिमन्दिर जिनस्थापना

ईशान दिशा में, कर्म नशाने, बिम्ब जिनालय राज रहे ।
पूजा करना है, दुख हरना है, आव्हानन का ताज़ रहे ।।

अथ ईशान दिशाचैत्यभूमिमन्दिर जिनस्थापना

स्थापना

त्रैलोक्य में जिनराज सेवा, भाग्य से सबको मिले । संसार सागर पार होने, धर्म का अमृत मिले ।।
भगवन तेरा गुणगान सुनकर, दर्शन को हम आये हैं । मनहर तुम्हारा रूप लखकर, हर्ष मन में पाये है ।।
ॐ ह्रीं चैत्य भूमि जिन प्रतिमाः अत्र अवतर अवतर संवौषट आह्वानन, अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनं, अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणं।

शंभू छंद

तन को निर्मल करने प्रभुवर, जल से स्नान किया करता ।
मन निर्मल मेरा होजावे, इसीलिये मैं जल अर्पण करता ।।
चहुं दिश में चतु मन्दिर राजे, जिस पर कलशा शोभा पाते ।

जिन समवशरण की पूजा को, शुभ भाव बनाकर हम आते ।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिशासम्बन्धी चैत्यभूमिमन्दिरस्थ जिनप्रतिमाभ्यः जलम्।

क्रोधी मन चैन न पाता है, यह द्वेष भाव बढ़वाता है ।
चरणों में चन्दन अर्पित है, शांति की आस लगाता हैं ।।
चहुं दिश में चतु मन्दिर राजे, जिस पर कलशा शोभा पाते ।
जिन समवशरण की पूजा को, शुभ भाव बनाकर हम आते ।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिशासम्बन्धी चैत्यभूमिमन्दिरस्थ जिनप्रतिमाभ्यः चन्दनं।

उज्जवल अक्षत शुभ भाव करे, अक्षय पद पाने आया हूं ।
अक्षत से पूजा करके मैं, अक्षय भावों को पाया हूं ।।
चहुं दिश में चतु मन्दिर राजे.....

ॐ ह्रीं चतुर्दिशासम्बन्धी चैत्यभूमिमन्दिरस्थ जिनप्रतिमाभ्यः अक्षतं।

कोमल पुष्पों की कलिकाएं, जीवों का चित्त लुभाती हैं ।
विषयों के भौंरे दुखी रहें, पुष्पों से पूजा भाती है ।।
चहुं दिश में चतु मन्दिर राजे.....

ॐ ह्रीं चतुर्दिशासम्बन्धी चैत्यभूमिमन्दिरस्थ जिनप्रतिमाभ्यः पुष्पं।

रसयुक्त सरस भोजन खाकर, यह तन भी रोगी होता है ।
नैवेद्य से पूजा करते हैं, यह तन रोगों को खोता है ।।
चहुं दिश में चतु मन्दिर राजे, जिस पर कलशा शोभा पाते ।
जिन समवशरण की पूजा को, शुभ भाव बनाकर हम आते ।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिशासम्बन्धी चैत्यभूमिमन्दिरस्थ जिनप्रतिमाभ्यः नैवेद्यं।

दीपक उजियाला करता है, अंतः में छाया अंधकार ।
दीपक ले पूजन को आये, चरणों में शत्-शत् नमस्कार ।।
चहुं दिश में चतु मन्दिर राजे.....

ॐ ह्रीं चतुर्दिशासम्बन्धी चैत्यभूमिमन्दिरस्थ जिनप्रतिमाभ्यः दीपं।

कर्मों ने जग भरमाया है, कर्मों ने नाच नचाया है ।
कर्मों का धुआं उड़े प्रभुवर, तव पूजा कर हर्षाया है ।।
चहुं दिश में चतु मन्दिर राजे.....

ॐ ह्रीं चतुर्दिशासम्बन्धी चैत्यभूमिमन्दिरस्थ जिनप्रतिमाभ्यः धूपं।

ज्ञानामृत सम फल कोई नहीं, ज्ञानामृत रस कभी पिया नहीं ।
चरणों में फल अर्पित करते, मुक्ति का फल मिल जाए सही ।।
चहुं दिश में चतु मन्दिर राजे, जिस पर कलशा शोभा पाते ।
जिन समवशरण की पूजा को, शुभ भाव बनाकर हम आते ।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिशासम्बन्धी चैत्यभूमिमन्दिरस्थ जिनप्रतिमाभ्यः फलं।

जल फल वसु द्रव्य मिलाकर के, यह अर्घ्य समर्पित करते हैं ।
पाऊं अनर्घ्य पद हे प्रभुवर, आनन्द के झरने झरते हैं ।।
चहुं दिश में चतु मन्दिर राजे.....

ॐ ह्रीं चतुर्दिशासम्बन्धी चैत्यभूमिमन्दिरस्थ जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं।

जयमाला

चैत्य भूमि पूजन करी, उत्तम भाव बनाये ।
सुर गण नरपति आए के, शत्-शत् शीश नवाए ।।

शेर चाल (हे दीन बंधु....)

जयकार करें हम, प्रथम भगवान तुम्हारा ।

चरणों में शीश झुकाता है भक्त तुम्हारा ।।
जाके समोशरण की, प्रभु वन्दना करें ।
है चैत्यधरा के प्रभों की अर्चना करें ।।
है पृथ्वी वहां नीलमणि, रत्न की बनी ।
श्रेणी में पंच मन्दिरों से, शोभा भी बढ़ी ।।
जिनदेव बसे मध्य में शोभा को बढ़ायें ।
हम भाव सहित जाके वहां अर्घ्य चढ़ायें ।।
ऊंची है भूमि जिस पर मन्दिर बहुत बने ।
जिनद्वार की शोभा बढ़ाने रत्न भी जड़े ।।
औ चौक बने कोठा बने द्वार भी बने ।
तिन पर सजी है गुमठी कलशा वहां घने ।।
आकाश में ध्वजा अनूप शोभा बढ़ाये ।
मानो हो नृत्यकार जैसे नृत्य कराये ।।
अंदर बनी है रचना बाहर भी है बनी ।
शुभ पीठ बने शिखर पे, मंडप भी है तनी ।।
एक सहस पत्र के कमल है साजते ।

उस गंधकुटी में प्रभु जी आके राजते ।।
मणियों से देव-देवियां मिल आरती करें ।
भावों से करें भक्ति को वे नृत्य भी करें ।।
शुभ पुण्य का उदय हुआ, जिन दर्श को पाया ।
ले अष्ट द्रव्य थाल सजा चरणों में आया ।।
है आपका ये मंदिर जहां पुण्य कमाये ।
घर जाके प्राणी पाप में ही डुबकी लगाये ।।
है आपका ये द्वार सत्य ज्ञान सिखाता ।
भटके हुए राही को भी ये राह दिखाता ।।
है आपका ये द्वार त्याग धर्म बताता ।
ये भक्त द्वार आके तुम्हें शीश झुकाता ।।

दोहा तुच्छ बुद्धि से है किया, हमने प्रभु गुणगान ।
यदि गलती हो गई कहीं, क्षमा करो भगवान ।।
''स्वस्ति जिन भगवान की, पूजा करें अपार ।
भवसागर से होएगी, नाव हमारी पार ।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिशासम्बन्धी चैत्यभूमिमन्दिरस्थ जिनप्रतिमाभ्यः पूर्णार्घं।

खातिका भूमि सम्बन्धी

दोहा

दूजी गली विशाल है, भूमि दूजी जान ।
स्वच्छ नीर से है भरी, नाम खातिका मान ।।

ॐ ह्रीं मार्गे वामदक्षिणपार्श्वे अन्तर्गलिमध्ये द्वितीयखातिकाभूमि संयुकतसमवसरणस्थ जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।1।

खाई रतनन है जड़ी, वलय व्यास में मान ।
शोभा अपरम्पार है, श्री सर्वज्ञ बखान ।।

ॐ ह्रीं द्वार्विंशतिभागवलय व्यासयुक्त द्वितीयखातिकाभूमि रत्नसोपान संयुक्तसमवसरणस्थ जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।2।

प्रथम दूजी के मध्य में, भरी खातिका जान ।
वेदी सुन्दर द्वार है, शोभा परम प्रमान ।।

ॐ ह्रीं प्रथम द्वितीय परिधौ अनेकलघुद्वारसंयुक्तसमवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।3।

लघु द्वारे बहु शोभते, गुमठी बनी प्रमान ।
सुंदर कलशा भी धरे, बारम्बार प्रणाम ।।

ॐ ह्रीं लघुद्वारे सकलशक्षुद्रगुमठी संयुक्तसमवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।4।

लघु द्वार के आगे में, खतिका पे पुल जान ।
पुल की शोभा है अधिक, देव करत सम्मान ।।

ॐ ह्रीं लघुद्वाराग्रे रत्नखचितसेतुयुक्तखातिकासंयुक्तसमवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।5।

लघु द्वार पुल से चले, गंध कुटी की ओर ।
सुगम मार्ग लगता कहें, रत्नों की है भोर ।।

ॐ ह्रीं चैत्यभूमेः अग्रे वेदिकालघुद्वारानेकलघुद्वारसेतुमार्गेभ्यः गन्धकुट्याः भूमिपर्यन्तसुगममार्गसंयुक्तसमवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।6।

दूजी वेदी द्वार पर, निकले नर पशु देव ।
अंतर गलियन जाय के, दर्श करें जिनदेव ।।

ॐ ह्रीं द्वितीयवेदिकाद्वारमध्यतः गन्धकुटीपर्यन्तसुगममार्गसंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।7।

पुल के ऊपर बैठ के, करते हैं आराम ।
ध्वजा कलश मणिमय बनी, आतम में विश्राम ।।

ॐ ह्रीं सेतोः उपरि उभयपार्श्वे कलशन्वजाबहुशिखरयुक्तबहु- विष्ठर संयुक्तसमवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।8।

दर परदा बैठक लगे, चित्र बने अभिराम ।
झलके खाई में सभी, सुन्दर जिन भगवान ।।

ॐ ह्रीं सेतोः उपरि अनेक विष्ठर संयुक्तसमवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।9।

चौपाई

खाई खातिका नीर जु प्यारा, जल है क्षीर सिन्धु सम न्यारा ।
छोटी बड़ी नाव भी चलती, तेज धार में नावें हिलतीं ।।

ॐ ह्रीं अनेकलघुविशालनौकासंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।10।

सुन्दर बंगला बने है ऊपर, शोभा पावे छतरी तापर ।
सिंह, गजादिक मुंह को बाये, ऐसे उसमें चित्र बनाये ।।

ॐ ह्रीं जबनिकाशोभाशोभितानेकनौकासंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।11।

नौकाओं में सुर-नर नाचे, जिन भगवान के गुण को वांचे ।
बाजे बजते बजे बधाई, प्रभु दर्शन की महिमा गाई ।।

ॐ ह्रीं जिनगुणगाण्कदेव विद्याधरयुक्तनोकासंयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।12।

अति शीघ्र नौका भी हिलती, दौड़-दौड़ करके वह चलती ।
जाकर उसमें आनन्द लेते, भवसागर से नाव को खेते ।।

ॐ ह्रीं खातिकासु अतिशीघ्रगामिनौकासंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।13।

श्री प्रभुवर के दर्शन पावे, समवशरण में पुण्य कमावे ।
भक्ति रंग में सब रंग जावे, पूजा करके हम हर्षावे ।।

ॐ ह्रीं अनेकातिशययुक्त पुण्यसंयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।14।

तृतीय पुष्प वाटिका भूमि

(शेर चाल....हे दीन बन्धु....)

तीसरी है भूमि, पुष्प वाटिका कही ।
पुष्पों की गंध, चारों ओर आती है सही ।।
अंतर गली में दूसरी वेदी वहां बनी ।
सुंदर बने हैं द्वार वो मणियों से है सजी ।।

ॐ ह्रीं अनेकातिशययुक्त पुण्यसंयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

सुंदर है कोट दूसरा, शोभा को बढ़ावे ।
चारों दिशा के मंदिरों के दर्श को पावे ।।

आगे हैं बनी पुष्प वाटिका को जानिये ।
शोभा बढ़े जिनदेव की, सब ये भी मानिये ।।

ॐ ह्रीं तृतीय भूमि द्वारे बामदक्षिणान्तरर्गलीषु चतुर्थभागप्रमाण द्वितीयवेदिका संयुक्तसमवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

भूमि है तीसरी का वलय व्यास जू कहा ।
रम्यक् है भूमि, घूमने को देव भी गया ।।
चारों दिशाओं में ही, चार द्वार कहे हैं ।
ऊंचे हैं द्वार तिन पर, कलशा भी धरे है ।।

ॐ ह्रीं तृतीय भूमि चतुर्थभागद्वितीयसाल (कोट) संयुक्त- समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

अन्तर गली में द्वार, अग्र भाग बताया ।
रम्यक् है भूमि, घूमने को देव भी आया ।।
चारों दिशाओं में ही, चार द्वार कहे हैं ।
ऊंचे हैं द्वार तिन पर, कलशा भी धरे हैं ।।

ॐ ह्रीं तृतीयभूमी चत्वारिंशद्भाग वलयव्यासपुष्पवाटिका संयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

चारों दिशा में शोभते हैं चार चौपरा ।
है आसपास वृक्ष लगे रंग है हरा ।।

सोपान चारों ओर भी मणियों की है बनी ।
बारहदरी में बार द्वार शोभा है बढ़ी ।।

ॐ ह्रीं तृतीयभूमौ चत्वारिंशद्भाग पुष्पवाटिकासंयुक्तसमवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

बंगला बने प्रकोष्ठ बने कलशा चढ़ाए ।
मंडप बने जिनगार की शोभा को बढ़ाये ।।
चौंतरफा बनी रौंस रत्नजड़ित है क्यारी ।
सुरवृक्ष फूल खिल रहे, शोभा भी है न्यारी ।।

ॐ ह्रीं तृतीयभूमौ अन्तरगल्याः द्वाराग्रे रम्यभूमिसंयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

बेला गुलाब केतकी औ फूल चमेली ।
उत्तम हैं फूल वाटिका में जानो पहेली ।।
इसकी सुगंध से दिशाएं महकती रहें ।
आकर के देव-देवियां भी क्रीड़ा को करें ।।

ॐ ह्रीं तृतीयभूमौ पुष्पवाटिकाचतुर्दिश अनेकरचनायुक्त चतुद्वरिसंयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

चौपाई

रौंस के दोनों ओर खड़े हैं, क्रम से केले वृक्ष बड़े हैं ।

सहज श्रेणी में बढ़ते जाएं, वृक्षों से शोभा बढ़ जाए ।।
रौंस के दाहिनी ओर है सुनना, आम अनार वृक्ष है गुनना ।
नींबू नरियल इमली जामुन, है बादाम बहुत फल के गुन।।

ॐ ह्रीं तृतीयभूमौ अन्तरगल्याः द्वाराग्रे ससीमद्वादशद्वारीयुक्त चतुःचतुष्कसंयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

(दोहा)

चारों विदिशा में बनी, रौंस वापिका ताल ।
वहां सार बैठक बनी, तुंग कलश ध्वज जाल ।।

ॐ ह्रीं अनेकप्रकोष्ठयुक्त तृतीयभूमिसंयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

उज्जवल नीर है क्षीर सम, सुन्दर कान्ति विशाल ।
रत्नों की झालर बंधी, दर्शत होए निहाल ।।

ॐ ह्रीं तृतीयभूमिपुष्पवाटिकामण्डपसंयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

(शेर चाल)

चारों दिशाओं में ही, चार द्वार कहे हैं ।
ऊंचे हैं द्वार तिन पर, कलशा भी धरे हैं ।।

ॐ ह्रीं तृतीयभूमी चत्वारिंशद्भाग बलयव्यासपुष्पवाटिकासंयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

(दोहा)

वृक्षों की शाखा हिले, नीचे शिला सुथान ।
मणिमय रत्न सुहावनी, मुनि विराजें आन ।।

ॐ ह्रीं तृतीयभूमिरत्नखचितसीमाचतुरालवालसंयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

धरें योग अनगार जी, ज्ञान ध्यान में लीन ।
मुक्ति सुंदरी पाएंगे, निज में हो लवलीन ।।

ॐ ह्रीं तृतीयभूमौ बेलादिअनेकपुष्पयुक्तवाटिका संयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

है प्रकोष्ठ मनहर बने, महिमा अतिशय जान ।
चार दिशा झालर लगी, हुई कर्म की हान ।।

ॐ ह्रीं तृतीयभूमौ अनेकपुष्पयुक्तपुष्पवाटिकासंयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

उपदेशक वहां बैठते, भव्य ज्ञान को पाय ।
अतिशय युक्त प्रकोष्ठ है, अपने कर्म खिपाये ।।

ॐ ह्रीं तृतीयभूमौ अनेकपुष्पयुक्तपुष्पवाटिकासंयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

शिला चन्द्र की शोभती, मुनि विराजे आन ।
कर्म गिरि को तोड़ने, करे आत्म का ध्यान ।।

ॐ ह्रीं तृतीयभूमौ देवादिक्रीड़ायुक्तपुष्पवाटिकासंयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

अभ्यंतर बंगला बना, करें देवता वास ।
नृत्य करें गुणगान भी, मुक्ति की हमें आस ।।

ॐ ह्रीं तृतीयभूमौ सीमायाश्रेणीबद्धकदलीवृक्षसंयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

रौंस क्षेत्र में देवगण, घूमे फिरे प्रवाह ।
प्रभु दर्शन के पुण्य से, मिले ज्ञान की राह ।।

ॐ ह्रीं तृतीयभूमौसीमायाः वामदक्षिणभागयोः अनेकवृक्ष फलपुष्पसंयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

(चौपाई)

वरन-वरन की रचना सोहे, समवशरण सबका मन मोहे ।
ज्ञानमयी फुलवारी महके, मनमोहक पक्षी भी चहके ।।
समवशरण में बैठे जिनवर, साथ में इनके होते गणधर ।
नित प्रति इनको शीश झुकाऊं, चरणों में आ अर्घ्य चढ़ाऊं ।।

ॐ ह्रीं तृतीयभूमौसीमापार्श्वद्वयनिम्बुसंगतरप्रमुखवृक्षसंयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

इत्याशीर्वाद पुष्पांजलि क्षिपेत्

चतुर्थ भूमि वर्णन प्रारम्भ

चौथी भूमि में चौथी गली है, सुन्दर वरण सुहाता है ।
वाम सु दक्षिण अंतरगली में, ॐ का द्वार सुभाता है ।।

ॐ ह्रीं चतुर्थवीथिकायां वामदक्षिणान्तरवीथिकाद्वारसंयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

सुभग सुसुन्दर नाटकशाला, नर नारी को भाती है ।
ऐसे जिन के समवशरण की, पूजा हमें सुहाती है ।।

ॐ ह्रीं चतुर्थभूमौ सुभगनाट्यशालासंयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

श्री जिन के गुण गा गाकर के, सुर बालायें नृत्य करें ।
हाव-भाव से पग रख रखके, मनहारी वह नृत्य करें ।।

ॐ ह्रीं चतुर्थभूमौ द्वारेनाट्यशालासंयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

सुभग सु सुन्दर नाटकशाला, नर-नारी को भाती है ।
ऐसे जिन के समवशरण की, पूजा हमें सुहाती है ।।

ॐ ह्रीं चतुर्थभूमौ तुर्यभागप्रमाणद्वितीयदुर्गतृतीयवेदिकासंयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

आगे दूजा कोट बताया, भाग चार परमाण कहा ।
तीजी वेदी नैन निहारे, चार भाग उर धार जरा ।।

ॐ ह्रीं चतुर्थभूमौ द्वितीयदुर्गतृतीयवेदिका चत्वारिंशदिभागेपवन संयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

चौथी उपवन भूमि है यह, भव्य जीव को भाती है ।
ऐसे जिन के समवशरण की, पूजा हमें सुहाती है ।।

ॐ ह्रीं चतुर्थभूमौ आग्नेयदिशि अशोकवनेन नैर्ऋतदिशि सप्तवर्णवनेन संयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

विदिशाओं में उपवन भूमि, शोभा अधिक बढ़ाती है ।
वलय व्यास के भाग चवालिस, पवन युक्त हर्षाती है ।।

ॐ ह्रीं चतुर्थभूमौ वायव्यदिशायां चम्पकवनेन ईशानदिशायाम् आम्रवनेन च संयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

ज्ञान के मोती प्रभु लुटायें, भर-भर सखियां लाती हैं ।
ऐसे जिन के समवशरण की, पूजा हमें सुहाती है ।।

ॐ ह्रीं चतुर्थभूमौ अशोक चम्पकसप्तवर्ण रसालवनमध्य स्थभूतवृक्षसंयुक्तसमवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

त्रिभंगी छन्द

आग्नेय दिशा में, स्वच्छ दशा में, वन अशोक जहं शोभत है ।
नैऋत्य को जानो, निज पहचानो, सप्त वर्ण मन मोहत हैं ।।

ॐ ह्रीं चतुर्थभूमौ अनेकरचनायुक्तचतुर्वनसंयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

वायव्य दिशा में, स्वच्छ दशा में, चम्पक वन जहं शोभत है ।
ईशान को जानो, निज पहिचानो, वन आम्र मन मोहत हैं ।।

ॐ ह्रीं चतुर्थभूमौ अशोकवने द्वादशद्वारीसंयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

वृक्षों को जांत, मन भरमाती, भूप वृक्ष जहं शोभ रहे ।
है प्रथम अशोका, चंप विशेषा, वृक्ष आम्र मन मोह रहे ।।

ॐ ह्रीं चतुर्थभूमौ अनेकरचनायुक्तद्वादशद्वारीसंयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

महिमा है न्यारी, बारह द्वारी, भक्तों का मन हरता है ।
गुण गान कराऊं, भावना भाऊं, जो कर्मों को हरता है ।।

ॐ ह्रीं चतुर्थभूमौ द्वादशद्वार्या:उपरि अनेकरचनायुक्तत्रितल गवाक्षसंयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

बैठक की गोखे, परदा शोभे, रत्नों की माला लटकी ।
जय जय सब ओर जय-जय शोर है, पापों की गठरी झटकी ।।

ॐ ह्रीं चतुर्थभूमौ अशोकवने द्वादशब्दार्या: उपरि देवा द्यधिष्ठित गवाक्षसंयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

विद्याधर आवे, जिनगुण गावे, बैठक हर्ष बढ़ावत है ।
हैं देव अधिष्ठित, प्रभुवर तिष्ठित, आकर शीश नवावत हैं ।।

ॐ द्वादशद्वार्या: आभ्यन्तरे दुर्गत्रयमध्ये पीठत्रयसंयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

दोहा बनी है बारह दरी वहां, अभ्यंतर में जान ।
चौक बीच त्रिकोट है, बीच त्रिपाठ महान ।।

ॐ चतुर्थभूमौ जिनदेहप्रमाणतः द्वादशगुणातुंगाशोकवृक्ष युक्तपीठत्रयसंयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

तीन पीठ ऊपर लगा, राजा वृक्ष अशोक ।
परम सरस गुणवान है, हरता सबका शोक ।।

ॐ चतुर्थभूमौ विविधशोभायुक्ताशोकवृक्ष संयुक्त समव- सरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

हीरा की है जड़ बनी-शाखा बनी है स्वर्ण ।
'स्वस्ति' देख हर्षित हुई, है सुंदर रूप सुवर्ण ।।

ॐ ह्रीं विविधशोभायुक्ताशोकवृक्षसंयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

पत्र बने पन्ना रतन, खिले लाल के फूल ।
शोभा अतिशय वान है, न करता है भूल ।।

ॐ चतुर्थभूमौ चतुर्वनेष चतुर्भूपवृक्षशोभासंयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

त्रिभंगी

चारों विदिशा हैं, स्वच्छ दशा है, चारों वन भी शोभ रहे ।
कुल चार अशोका, हवा का झोंका, देवों का मन लुभा रहे ।।

शोभा है न्यारी, देव संवारी, सब सौभाग्य को जगा रहे ।
'स्वस्ति' हर्षित है, आकर्षित है, शीश चरण में झुका रहे ।।

अशोक वृक्ष पूजा

स्थापना-गीता छंद

त्रैलोक्य दर्शीनाथ मम जीवन सफल कर दो मेरा ।
संसार में दर-दर भटकता, अब शरण पाया तेरा ।।
भगवन् तुम्हीं, जिनवर तुम्हीं, सुख संपदा के नाथ हो ।
मनहर अशोका, पर विराजे, तव चरण में माथ हो ।।

ॐ ह्रीं अशोक वृक्षस्थ जिन प्रतिमाः अत्र अवतर अवतर संवौषट आह्वानन, अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनं, अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणं।

गीता छंद

जंजाल में फंसकर प्रभो, निशदिन कमाया पाप है ।
इस पाप मल प्रक्षाल हेतु, तव चरण की जाप है ।।

आग्नेय दिश में है अशोका, जल ले हम पूजा करें ।
संकट हरो सब पाप मेरे, तव चरण वंदन करें ।।

ॐ ह्रीं आग्नेयदिशिअशोक वृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्यः जलं निर्व.स्वाहा।

न चाह है न कोई इच्छा, बस तेरा ही ध्यान हो ।
औ मैं अशोक की छांव बैठूं, मुझको केवल ज्ञान हो ।। आग्नेय....

ॐ ह्रीं आग्नेयदिशिअशोक वृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्यः चंदनं निर्व.स्वाहा।

अक्षय तुम्हीं अविनाशी तुम, अक्षय तुम्हारा धाम है ।
अधिपती बनूं अविनाशी पद का, मिल रहा विश्राम है ।। आग्नेय....

ॐ ह्रीं आग्नेयदिशिअशोक वृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्यः अक्षतं निर्व.स्वाहा।

पुष्प मनहर मन लुभावे, काम ने उलझाया है ।
पुष्पों से पूजा हम करें, भक्तों का मन हर्षाया है ।। आग्नेय....

ॐ ह्रीं आग्नेयदिशिअशोक वृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्यः पुष्पं निर्व.स्वाहा।

पेट मांगे नित्य भोजन, आपकी से पूजा करूं ।
हो जाय क्षय यह भूख मेरी, ध्यान मैं तेरा धरूं ।। आग्नेय....

ॐ ह्रीं आग्नेयदिशिअशोक वृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्यः नैवेद्यं निर्व.स्वाहा।

दीप जग मग ज्योति देवा, ज्ञान निज दीपक जले ।
अज्ञान हर विज्ञान पावे, आत्म निज ज्योति जले ।। आग्नेय....

ॐ ह्रीं आग्नेयदिशिअशोक वृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्यः दीपं निर्व.स्वाहा।

दुष्ट कर्मों ने सताया, जग से हम हैरान हैं ।
हम ध्यान आतम का करे, होवे मेरा कल्याण है ।। आग्नेय....

ॐ ह्रीं आग्नेयदिशिअशोक वृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्यः धूपं निर्व.स्वाहा।

भाग्य में सौभाग्य न था, फल बिना भटका फिरा ।
मैं खाके जग की ठोकरों को, अब चरण में आ गिरा ।। आग्नेय....

ॐ ह्रीं आग्नेयदिशिअशोक वृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्यः फलं निर्व.स्वाहा।

चारित्र ना पालन किया, और ज्ञान मुझसे दूर है ।
औ दृष्टि ना सम्यक हुई, अवगुण भरे भरपूर हैं ।।
आग्नेय दिश में है.....

ॐ ह्रीं आग्नेयदिशिअशोक वृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्व.स्वाहा।

सप्तपर्ण वन वृक्ष पूजा (नैऋत्य दिशा)

स्थापना-शंभू छंद

सम अवसर जिसमें मिलता है, शुभ समवशरण कहलाता है।
दु:खों के सागर से निकाल, सुख अमृत पान कराता है।।
निज की दृष्टि निज में रखते, फिर भी सब जीवों को देखे।
पावन महिमा को गाकर हम, निज का कारण निज में लेखे।।

दोहा

सप्त वर्ण वन में प्रभु, है अशोक की छांव।
दिश नैऋत्य में राजते, देते सब को ठांव।।

ॐ ह्रीं नैऋत्य दिशि सप्तपर्ण वन वृक्षस्थ जिन प्रतिमा: अत्र अवतर अवतर संवौषट आह्वानन, अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनं, अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणं।

तर्ज (चौबीसी पूजा)

मन के मल से दुर्गंध, निशदिन है आती।

निर्मलता मन में होय, तो पूजा भाती ।।
है सप्त पर्ण नव दीप, वृक्ष अशोक लगा ।
मैं जलसे पूजूं नाथ, धर्म स्वभाव सगा ।।

ॐ ह्रीं नैऋत्य दिशि सप्तपर्ण वन वृक्षस्थ जिन प्रतिभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

मकड़ी सा जाल बनाय, खुद फंसता जाता ।
चिन्ता ने जलाया नाथ नेक न सुख पाता ।।
है सप्त पर्ण नव.....

ॐ ह्रीं नैऋत्य दिशि सप्तपर्ण वन वृक्षस्थ जिन प्रतिभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

यह आंख होयेगी बंद, फिर भी पद चाहे ।
अक्षय पद की है चाह, मुक्ति पथ राहें ।।
है सप्त पर्ण नव.....

ॐ ह्रीं नैऋत्य दिशि सप्तपर्ण वन वृक्षस्थ जिन प्रतिभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

आतम है खुशबूदार, फूल तो मुरझाता ।
सुंदर चेतन का रूप, तप से खिल जाता ।।

है सप्त पर्ण नव.....

ॐ ह्रीं नैऋत्य दिशि सप्तपर्ण वन वृक्षस्थ जिन प्रतिभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

रसना का रस हम घोल, निशदिन पीते हैं ।
तृप्ती ना होती नाथ, फिर भी जीते हैं ।।
है सप्त पर्ण नव.....

ॐ ह्रीं नैऋत्य दिशि सप्तपर्ण वन वृक्षस्थ जिन प्रतिभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अंतर की आंख न खोल, बाहर भटक रहा ।
अंतर में ज्ञान प्रकाश, जग में दु:ख, सहा ।।
है सप्त पर्ण नव.....

ॐ ह्रीं नैऋत्य दिशि सप्तपर्ण वन वृक्षस्थ जिन प्रतिभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मों ने छिपाया ज्ञान, ढूंढूं मैं बाहर ।
तप से मिटता अज्ञान, करता न आदर ।।
है सप्त पर्ण नव.....

ॐ ह्रीं नैऋत्य दिशि सप्तपर्ण वन वृक्षस्थ जिन प्रतिभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

हो सपना सुख साकार, यह पुरूषार्थ किया ।
सुख मिले धर्म आधार, यह न ज्ञान लिया ।।
आया था मुट्ठी बांध, कुछ न साथ गया।
तप दर्शन ज्ञान चरित्र, इनसे दूर रहा ।।
है सप्त पर्ण नव दीप, वृक्ष अशोक लगा ।
चंदन से पूजूं नाथ, धर्म स्वभाव सगा ।।

ॐ ह्रीं नैऋत्य दिशि सप्तअर्ण वन वृक्षस्थ जिन प्रतिभ्यः अर्घ्यंनिर्वपामीति स्वाहा।

चंपक वन पूजा

वायव्य दिशा

स्थापना-गीता छंद

अग्नि तपाये स्वर्ण को जब, वह खरा हो जाता है ।
यह जीव तप अग्नि में तपकर, शुद्ध शिव बन जाता है ।।
ये पूजा अर्चा और वंदन, ध्यान आतम का करे ।
सार्थक बने इस से ही जीवन, कर्म दुर्गति को हरे ।।

स्थापना (चाल : नरेन्द्रं फनेन्द्रं)

ये संसार की माया सबको घुमाये ।
जगत में बचा वो जो प्रभु शर्ण आये ।।
चंपक के चन में अशोका है राजे ।
वायव्य दिशा में प्रभुजी विराजे ।।

ॐ ह्रीं वायव्य दिशायां चम्पक वन वृक्षस्थ जिन प्रतिमाः अत्र अवतर अवतर संवौषट आह्वानन, अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनं, अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणं।

हाथों में लेकर के, जल हम चढ़ायें । भावों की निर्मलता आके बढ़ायें ।।
चंपक के वन में अशोका है राजे, वायव्य दिशा में प्रभु जी विराजे ।।

ॐ ह्रीं वायव्य दिशि चम्पक वन वृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

जीवन पहेली को सुलझाने आया, अपने प्रभु को मनाने मैं आया ।
चंपक के वन में अशोका है राजे, वायव्य दिशा में प्रभु जी विराजे ।।

ॐ ह्रीं वायव्य दिशि चम्पक वन वृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मों ने जीवन को क्षयवत किया है, प्रभु आपसे सौख्य अक्षत लिया है ।
चंपक के वन में अशोका है राजे, वायव्य दिशा में प्रभु जी विराजे ।।

ॐ ह्रीं वायव्य दिशि चम्पक वन वृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

रागों के कांटों में निशदिन उलझता, ढल जाये उम्र न फिर भी सुधरता ।
चंपक के वन में अशोका है राजे, वायव्य दिशा में प्रभु जी विराजे ।।

ॐ ह्रीं वायव्य दिशि चम्पक वन वृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

आतम का भोजन कभी नाहीं कीना, रसना रसों का सदा स्वाद लीना ।
चंपक के वन में अशोका है राजे, वायव्य दिशा में प्रभु जी विराजे ।।

ॐ ह्रीं वायव्य दिशि चम्पक वन वृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आतम में ज्ञान का फैले उजाला, प्रभु तेरे चरणों की फेरूं मैं माला ।
चंपक के वन में अशोका है राजे, वायव्य दिशा में प्रभु जी विराजे ।।

ॐ ह्रीं वायव्य दिशि चम्पक वन वृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मों की धूप सदा है सताती, तपस्या करम सेना को है भगाती ।
चंपक के वन में अशोका है राजे, वायव्य दिशा में प्रभु जी विराजे ।।

ॐ ह्रीं वायव्य दिशि चम्पक वन वृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

हाथों की रेखा कर्म फल बताती, पूरी ये बातें सही नाहीं पाती ।
चंपक के वन में अशोका है राजे, वायव्य दिशा में प्रभु जी विराजे ।।

ॐ ह्रीं वायव्य दिशि चम्पक वन वृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्घ्यों से जीवन की ज्योति जलायें, अर्घ्यों की थाली चरण ले के आयें ।
चंपक के वन में अशोका है राजे, वायव्य दिशा में प्रभु जी विराजे ।।

ॐ ह्रीं वायव्य दिशि चम्पक वन वृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्यः अर्घ्यंनिर्वपामीति स्वाहा।

आम्रवनस्थ जिन पूजा प्रारंभ
ईशान दिशा

त्रिभंगी छंद (स्थापना)

हो सम्यक ज्ञानी, त्रिभुवन ध्यानी, ज्ञानामृत पिलवाया है ।
हो करूणा दानी, हितमित वाणी, आनंद फूल खिलाया है ।।
स्थित हो वन में, आम चमन में, भक्त तुम्हें परणाम करें ।
बहे ज्ञान की गंगा, मन हो चंगा, ध्यान तेरा सब कर्म हरें ।।

ॐ ह्रीं ईशान दिशि आम्रवन वृक्षस्थ जिन प्रतिमाः अत्र अवतर अवतर संवौषट आह्वानन, अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनं, अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणं।

शंभू छंद

बहती रहती सरिता हर पल, इससे जल निर्मल रहता है ।
जब जैसे निर्मल भाव बने, शांति से कर्मों को सहता है ।।
आमों के वन में स्थित है, उन जिनवर को करता प्रणाम ।

हो मान गलित मेरा प्रभुवर, जीवन की न हो दुखद शाम ।।

ॐ ह्रीं ईशान दिशायाम् आम्र वनवृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चंदन ने तन शीतल कीना, पर आतम ताप से भरा हुआ ।
सर्दी में भी मन गरम रहे, पर शीतल धर्म न कभी छुआ ।।
आमों के वन में स्थित है.....

ॐ ह्रीं ईशान दिशायाम् आम्र वनवृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

आतम अक्षय अविनाशी है, तन तो जीता मरता रहता ।
अक्षत थाली भर ले आया, अक्षय पद से जब है तरता ।।
आमों के वन में स्थित है.....

ॐ ह्रीं ईशान दिशायाम् आम्र वनवृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

सुंदर-सुंदर पुष्पों ने जग, जीवन को नित्य लुभाया है ।
इस काम वासना से छूटे, पुष्पों का थाल भराया है ।।
आमों के वन में स्थित है.....

ॐ ह्रीं ईशान दिशायाम् आम्र वनवृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

मन से कीना वच से कीना, तन से भोजन नित करते हैं ।

पर पेट रहे निशदिन खाली, नैवेद्य समर्पित करते हैं ।।
आमों के वन में स्थित है, उन जिनवर को करता प्रणाम ।
हो मान गलित मेरा प्रभुवर, जीवन की न हो दुखद शाम ।।

ॐ ह्रीं ईशान दिशायाम् आम्र वनवृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीपक की ज्योति दम दमके, आतम उजियारा ना करती ।
निज ज्ञान दीप की ज्योति जले, इसीलिये दीप अर्पित करती ।
आमों के वन में स्थित है.....

ॐ ह्रीं ईशान दिशायाम् आम्र वनवृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

आठों कर्मों के घेरे में, आतम कर्मों से भरा हुआ ।
इन कर्मों का ही धुआं उड़े, हमने प्रभु तेरा ध्यान किया ।।
आमों के वन में स्थित है.....

ॐ ह्रीं ईशान दिशायाम् आम्र वनवृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

जो अशुभ कर्म फल अशुभ गति, शुभ से शुभ ही मिलता जाता ।
कर्मों को नित करता रहता, फल क्या है ध्यान नहीं जाता ।।
आमों के वन में स्थित है.....

ॐ ह्रीं ईशान दिशायाम् आम्र वनवृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल चंदन अक्षत पुष्प चरू, दीपक की ज्योति ले आया ।
आठों द्रव्यों को मिला लिया, अर्घ्यों का संगम है भाया ।।
आमों के वन में स्थित है, उन जिनवर को करता प्रणाम ।
हो मान गलित मेरा प्रभुवर, जीवन की न हो दुखद शाम ।।

ॐ ह्रीं ईशान दिशायाम् आम्र वनवृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा

चारों ओर चतु भूमि है, वृक्ष फूल फल जान ।
उपवन में जिन राजते, शत् शत् करूं प्रणाम ।।

पद्धरि छंद

उपवन भूमि है अति विशाल, दर्शत मन होता है खुशाल ।
सुंदर-सुंदर वृक्षों के फूल, जाकर के सब कुछ जात भूल ।
वृक्षों की महिमा है अपार, जीवन कर देते हैं निसार ।
आपस में ईर्ष्या द्वेष नहीं, पृथ्वी अंदर की थाह नहीं ।

मानव लंबे हैं पास खड़े, इसीलिये वृक्ष वे कहां बढ़े ।
मानव के साथ में वृक्ष रहे, मरने पर साथ भी यही जले ।
फिर मानव भी दानव बनता, पेड़ों से न शिक्षा लेता ।
वृक्षों में भूप अशोक कहां, इसके नीचे जिन ज्ञान बहा ।
चारों दिश में है चार खड़े, प्रभु के कारण बन जाय बड़े ।
जय तीन पीठ सुंदर महान, शोभे श्री गंध कुटी सुजान।
उस पर सिंहासन है प्यारा, और कमल रचा न्यारा-न्यारा ।
उस पर प्रतिमा शोभा पाये, भक्ति में भक्त वहां जाये ।।
चारों दिश में ही राज रहे, त्रिभुवन के ईश्वर साज रहे ।
जय तीन छत्र फिरता है शीश, दर्शन से मिलता शुभाशीष ।
अठ प्रातिहार्य चमके महान, तीर्थंकर देवें आत्मज्ञान ।
जिनवर के गुण का गान करें, जय जय करके सम्मान करें ।
पृथ्वी फल फूल चढ़ाती है, वीणा यश गान भी गाती है ।
दीपक ये ज्योति प्रणाम करे, ज्ञानी जग का अज्ञान हरे ।
तप करके अमृत पाया है, भक्तों को ज्ञान लुटाया है ।

तीनों लोकों के आप ईश, चरणों में झुकता रहे शीश ।
उपवन की उपमा कौन कहे, उपवन में जाकर शांति लहे ।
उपवन में सुंदर फूल खिले, उपवन में प्रभु का ज्ञान मिले ।
उपवन में जा बन जाते है, सु:खों के फूल खिलाते हैं ।
तुम तपः पूत चिद् शाश्वत हो, आराध्यों के आराधक हो ।
तुम काम क्रोध को जीत लिया, जय राग द्वेष को दूर किया ।
भक्तों के हो तुम कल्पवृक्ष, भक्तों के हो तुम रक्ष-रक्ष ।
तेरे चरणों का वरण करूं, चरणों में आकर शीश धरूं ।
'स्वस्ति' उत्थान की राह मिले, बस केवल ज्ञान का दीप जले ।

ॐ ह्रीं चतुर्दिशासम्बन्धि चतुर्थोपवन भूमि वृक्षस्थ जिन प्रतिभाभ्यः पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा वन में उपवन में जाय कर, ज्ञान दीप जग जाये ।
सौख्य महा संपत्ति मिले, शत्-शत् शीश नवाय ।।

भगवन कुछ न लेते हैं, देते अमृत ज्ञान । जीवन अमृतमय हुआ, बारंबार प्रणाम ।।
समवशरण शुभ पाठ को, जो भी भव्य कराय । जीवन चमन खिलाये कर, मुक्ति सुंदरी पाय ।।

।।इत्याशीर्वाद ।।

पंचम भूमि (ध्वज भूमि)

चौपाई

भूमि पंचम गली बताई, बाम दाहिने देखो भाई ।
अंदर द्वार तीसरी वेदी, चार भाग परमाण जु देदी ।।

ॐ ह्रीं पंचमगल्यां वामदक्षिणभागयोः आभ्यन्तरगल्यां चतुर्थ भागप्रमाणान्तरवेदिका संयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।1।

कोट तीसरा भाग चार हैं, स्वर्ण वर्ण शोभे अपार है ।
पंचम भूमि सुंदर भारी, ध्वज फहरे जिन गुण तैयारी ।।

ॐ ह्रीं पंचमभूमौ चतुर्थभागस्वर्णमयमहासुन्दरतृतीय सालसंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।2।

भूमि पांचवीं भाग चवालिस, वलय व्यास पहचाने जे ईश ।
वेदी कोट विशाल बने है, नानाविधि चित्राम जजे हैं ।।

ॐ ह्रीं पंचमभूमौ चतुः चत्वारिंशद भागवलयव्यासवेदिकाचित्र समूह संयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।3।

मन हारी चित्रों की क्यारी, तीर्थंकर के भवके धारी ।
चित्र निहार ज्ञान को पाये, चरणों में जा शीश झुकाये ।।

ॐ ह्रीं पंचमभूमौसमवरणरणेशालवेदिकायां: तीर्थंकरपूर्वभव चित्र संयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।4।

स्वप्नों को जिन माता देखे, राजा से फिर फल को पूछे ।
परंपरा चित्रों की सुंदर, सुंदर चित्र बने हैं अंदर ।।

ॐ ह्रीं पंचमभूमौ शालवेदिकाचित्र संयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।5।

तीर्थंकर का न्हवन करे हैं, क्षीर-नीर से कलश भरे हैं ।
ऐरावत पर चढ़कर जाये, हम चरणों में शीश झुकायें ।।

ॐ ह्रीं पंचमभूमौ जिनस्नपनचित्र संयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।6।

चक्रवर्ती की सेना देखो, तीर्थंकर महिमा को लेखो ।
वैभव पुण्य बड़ा भारी है, झुके चरण दुनिया सारी है ।।

ॐ ह्रीं पंचमभूमौ शालवेदिका चक्रवर्तीविभव चित्रसंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।7।

नारायण बलभद्र बनाया, प्रतिनारायण को दर्शाया ।
भवों भवों के चित्र दिखायें, इन चित्रों से शिक्षा पाये ।।

ॐ ह्रीं पंचमभूमौ शालवेदिकायांनारायणवलभद्रादिविभव चित्र संयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।8।

भोग भूमि को भी दिखलाया, उत्तम-मध्यम, जघन्य बताया ।
युगल जोड़े इसमें रहते हैं, तीव्र कषाय नहीं करते हैं ।।

ॐ ह्रीं पंचमभूमौ शालवेदिकायां भोगभूमियुगलचित्र संयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।9।

कल्पवृक्ष वस्तु को देवे, चिंता सारी वे हर लेवें ।
प्रथम स्वर्ग का इन्द्र दिखाया, दूजे तीजे को बतलाया ।।
ॐ ह्रीं पंचमभूमौ संयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।
स्वर्गों के मनहारि चित्र हैं, पुण्य की महिमा भी विचित्र है ।
इन्द्राणी प्रभु सेवा करती, गहने रतनमय तन पर धरती हैं ।।
ॐ ह्रीं पंचमभूमौ प्राक्चतुःस्वर्गमध्यमानस्तम्भे सुन्दरवस्त्रायुक्त मंजूषाद्वय संयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।10।
रत्नों की जंजीर चढ़ायें, आभूषण स्वर्गों से लाये ।
वस्त्राभूषण जहां से आवे, मंजूषा विशेष कहावे ।।
ॐ ह्रीं पंचमभूमौ वेदिकाशालकंगूरागुरजादिसंयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।
खुश हो वस्त्रों को पहनाती, आभूषण से उन्हें सजाती ।
यही चित्र मन को हरते हैं, समवशरण सुंदर करते हैं ।।
ॐ ह्रीं पंचमभूमौ कोटशालवेदिकोपरि त्रितलदेवीदेवयुक्त विष्टर संयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।11।
आगे-आगे सागर जानो, बनी कुभोग भूमि को मानो ।
वन मानुष जैसे बनते हैं, हाथी, घोड़ा, बैल घने हैं ।।
ॐ ह्रीं पंचमभूमौ सिंहादिदशभेहचिन्हयुक्तध्वजासंयुक्त समव- सरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।12।

वेदी में है चित्र बनाये, आस-पास सुंदर झलकाये ।
वेदी कोट विशाल के ऊपर, गुरज कंगुरा बने हैं तापर ।।

ॐ ह्रीं पंचमभूमौ एकदिशासम्बन्धशीत्यधिकसहस्त्रध्वजासंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।13।

अडिल्ल छंद

ऊपर सुंदर बैठक जानिये, उन पर सुंदर चित्र बने हैं मानिये ।
कलशा रवि ध्वजा लहरायेजी, जय जय करतेदेव देवियां आयेजी ।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिक्षुत्रिंशतविंशत्यधिकचतुःसहस्त्रमहाध्वजासंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।14।

ध्वजा भूमि में ध्वज ही ध्वज को देखिये ।
सब पर सुंदर चिन्ह बने हैं पेखिये ।।
सिंह हाथी वृष मोर गनी माला बनी ।
चक्र हंस गरूड़ ओ देव कमल के भेदही ।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिशासु महाध्वजामिःसह 466560 लघुध्वजासंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।15।

एका ध्वजा पर चिन्ह एकही है बना ।
इकसो आठ ध्वजा ही क्रम से है तना ।।
एक सहस आठ ध्वजा साथ लहरायेजी ।
हो प्रसन्न हम मिलकर शीश झुकाये जी ।।

ॐ ह्रीं पंचमभूमौ चतुर्दिशासु 470880 ध्वजासंयुक्तसमवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।16।

चारों ओर ध्वजा की पंक्ति शोभती ।
देव देवियां मिलकर यश को गावती ।।
सहस-सहस से वह शोभा को जानिये ।
मिले शांति प्रभु के चरणों में मानिये ।।

ॐ ह्रीं वृषभचिनस्य अष्टाशीत्यंगुलप्रमाण सुवर्णमयध्वजास्तम्भ संयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।17।

महाध्वजा के संग में लघु को जानिये ।
चार लाख छोटी चहूं दिश की मानिये ।।
महिमा समवशरण की अनुपम है महा ।
वर्णन कैसे करूं शक्ति भी है कहा ।

ॐ ह्रीं पंचमभूमौ ध्वजासमूहसंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।18।

चार सहस अरू तीन सो बीस को मानिये ।
महा ध्वजा चारों दिश की परमानिये ।।
ध्वज देखात मन हर्षत होय विभोर जी ।
लहर लहर लहराये करती हैं वे शोर जी ।।

पीत वर्ण हो गया गगन के जानिये ।
'स्वस्ति' वर्णन गाये बात ये मानिये ।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिक्षु त्रिशत विशत्यधिक चतुःसहस्त्र महाध्वजा संयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।19।

ध्वजा के खंभे स्वर्णमयी हैं शोभते ।
सुंदरता जीवों के मन को मोहते ।।
अट्ठासी अंगुल के बने प्रमाण जी ।
चरणों में प्रभु के मिलता है सार जी ।।
ऊपर का वह दण्ड मणिमय है बना ।
धनु पच्चीस के अंतर में लहरे ध्वजा ।।
लहर लहर लहराये ध्वजा शुभ मानिये ।
प्रभु चरणों का है प्रताप यह जानिये ।

ॐ ह्रीं पंचमभूमौ विविधरचना संयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।20।

चौपाई

सुंदर भूमि ध्वजा है सुंदर, बाल वापि गिरी जाय समंदर ।
जाते वहां सभी नर नारी, देव करें क्रीड़ाएं न्यारी ।।

वृक्ष खड़े फल फूल सुजानो, झुकी डालियां तीर कमानो ।
कल्प वृक्ष की बहती धारा, मनवांछित होवेगा सारा ।।
मुनिवर वहां विहार भी करते, सौख्य देते दोषों को हरते ।
दुष्ट कर्म के आप विनाशी, इससे हुऐ आप अविनाशी ।।
भव्य जीव चरणों में आवे, आकर तेरा ध्यान लगावे ।
कोई 'स्वस्ति' त्रिकाल ही ध्यावे, आकर वे शीश झुकावे ।।

दोहा

पंचम भूमि दर्श से, पंचम गति को पाये ।
पंचम ज्ञान मिले मुझे, शत् शत् शीश नवाये ।।
पंच महाव्रत धार कर, पंच पाप विनशाय ।
पांचों समिति पालकर, चरणन शीश झुकाय ।।

ॐ ह्रीं पंचमभूमौ चतुः चत्वारिंशद समवसरणस्थित जिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं।

समवशरण षष्ठम भूमि अर्घ्य

त्रिभंगी छंद

षष्ठी भूमि की गली, दाई बायी ये जान ।
अंदर द्वारके पास को, नाटक शाला मान ।।

ॐ ह्रीं षष्ठ भूमेः गल्यां वामदक्षिण भागे अन्तर गल्याः द्वारे नाटयशाला संयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।1।

तीजो कोटके भाग में, चौथी वेदी जान ।
भूमि चवालिस में वलय, व्याप्त दृगों को आन ।।

ॐ ह्रीं तुर्यभागतृतीयसालभागद्वयचतुर्थवेदिकामध्ये चतुःचत्वा- रिंशद्भागबलयव्यासभूमि संयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।2।

तृतीय कोट कंचन वरण, ध्वज कंगुरा ज्ञान ।
तिहरी बैठक गोखा में, नये देवधर ध्यान ।।

ॐ ह्रीं विविधरचनायुक्ततृतीयसालसंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।3।

चतुवेदी है रूपवती, पीत वर्ण परमाण ।
बनी बैठकें गुरज में, बारंबार प्रणाम ।।

ॐ ह्रीं विविधरचनायुक्त चतुर्थवेदिकासंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।4।

बीच भूमि वर्णन सुनो, विदिशा वन के मांहि ।
कल्पवृक्ष भी शोभते, दुःख संकट कुछ नाहि ।।

ॐ ह्रीं षष्ठभूमिं परितः कल्पवृक्ष संयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।5।

मन वांछित वस्तु दिये, कल्पवृक्ष के वृक्ष ।
दश भेदों के सहित हैं, कार्य करन में दक्ष ।।

ॐ ह्रीं षष्ठभूमौ मनोवांछितवस्तुदायक कल्पवृक्षसंयुक्त समव- सरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।6।

चौपाई

सीखों तुम वृक्षों से देना, कभी किसी से कुछ न लेना ।
कल्पवृक्ष मन वांछित देते, नहीं किसी से कुछ भी लेते ।।
बर्तन देते, घर भी देते, आभूषण औ वस्त्र भी देते ।
भोजन पानी जग मग ज्योति, सुंदर दे माला के मोती ।।
बाजे दे खुशिया दिखलावें, दीपक तमको दूर भगावे ।
कल्पवृक्ष सम न है कोई, 'स्वस्ति' यह सब पुण्य कमाई ।।

ॐ ह्रीं षष्ठभूमि दशप्रकार कल्पवृक्षसंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।7।

नरेन्द्र छंद

चारों दिश में कल्पवृक्ष हैं, मंदिर भी सुखकारी ।
ताल वापिका शोभा पाये, शोभित है त्रिपुरारी ।।

ॐ ह्रीं षष्ठभूमौ वापिकाद्रहमन्दिर संयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।8।

चन्द्रकान्त स्फटिक शिलामणि, इस पर मुनिवर राजे ।
ध्यान आतमा का नित करके, निज आतम में साजे ।।

ॐ ह्रीं षष्ठभूमौ ध्यानस्थमुनिगणयुक्तचन्द्रकान्ताशिलासंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।9।

कर्मराज यह मोह बलि है, इस पर आप प्रहारी ।
महा पुण्य मय संयम धारी, कर्म मेघ को टारी ।।

ॐ ह्रीं षष्ठभूमौ आत्मध्यानयुक्तपुण्यसम्पादकमहामुनिसंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।10।

समवशरण में भविजन आवें, गुरू उपदेश सुनावें ।
ऐसे आचारज गुरू वरको, हम सब शीश झुकावें ।।

ॐ ह्रीं षष्ठभूमौ विविधस्थानेषु धर्मोपदेशकदिगम्बरयतिससंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।11।

सुंदर पर्वत बने वहां पर, उन पर मुनिवर राजे ।
ध्यानाग्नि में पाप नष्ट कर, आतम में ही साजें ।।

ॐ ह्रीं षष्ठभूमौ ध्यानारूढ़यतियुक्तपर्वसंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।12।

क्रीड़ा करने देवों के गण, उस वन में भी आवें ।
पूजत मुनिवर के ये चरणा, उनका मन हर्षावें ।।

ॐ ह्रीं षष्ठभूमौ स्वरोपकारदिगम्बरयतिसंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।13।

चारों दिश में चार ही वन है, भूप मध्य में रहता ।
दर्शत पाप भगे सब ही के, झरना सुख का बहता ।।

ॐ ह्रीं षष्ठभूमौ चतुर्दिशासु वनमध्ये चतुभूपवृक्षसंयुक्त समव- सरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।14।

मन वच काय त्रियोग सम्हारो, भूप वृक्ष को देखो ।
बाहर दरी वहां पर रहती, अतिशय प्रभु का लेखो ।।

ॐ ह्रीं विविधरचनायुक्तद्वादशद्वारीसंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।15।

कुरसी जैसी बनी वहां पर, स्वर्ण रतनमय शोभे ।
पुण्यवान जाकर सुख भोगे, पापी कुछ न देखे ।।

ॐ ह्रीं विविधरचनायुक्तद्वादशद्वारीसंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।16।

ऊंचे-ऊंचे शिखर बुलाते, जग मग मणियां चमके ।
उन पर ध्वजा लहर लहराती, आतम प्रभु का दमके ।।

ॐ ह्रीं जिनेन्द्रगुणगायकदेवयुक्तद्वारशद्वारीसंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।17।

सुंदर-सुंदर, ऊंचे-ऊंचे, देव गुणों को गाते ।
अतिशय महिमा तेरी सुनकर, दर्श को हम भी आते ।।

ॐ ह्रीं द्वादशद्वायमि् सालत्रयमध्य सिंहासनत्रयपीठत्रयसंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।18।

द्वादश द्वार है शोभा पाये, चौंक मध्य में आवे ।
कोट तीसरा पीठ तीन हैं, सिंहासन मन भावे ।।

ॐ ह्रीं पीठत्रयोपरि भूपवृक्षसंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।19।

भवियों की यह पीठ है, जग मग शोभा पावे ।
तीनों के ऊपर भी देखो, भूप वृक्ष झलकावे ।।

ॐ ह्रीं विविध रचनायुक्त भूपवृक्ष संयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।20।

जड़ हीरे के बनी हुई है, मणिमय शाखा जानो ।
पन्नों के पत्ते हैं शोभित, चारों सीधे मानो ।।

ॐ ह्रीं विविधपुष्पयुक्त भूपवृक्ष संयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।21।

जिनवर के सम ऊंचा समझो, बारह गुना जानो ।
शोभा सुंदर समवशरण की, मौहे मन ये मानो ।।

ॐ ह्रीं षष्ठभूमौ जिनशरीरद्वादशगुणोच्चभूपवृक्षसंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।22।

वृक्षों के चारों दिशा में, जिन दर्शन अपना देवें ।
मानस्तंभ से मान गलित हो, कर्म आपना खेवें ।।

ॐ ह्रीं षष्ठभूमिचतुर्दिशा चतुः चतुः मन्दिरस्थित भूपवृक्षसंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।123।

एक वृक्ष का वर्णन करके, चारों दिश ये जानो ।
तीर्थंकर का वैभव है ये, बातें प्रभु की मानो ।।

ॐ ह्रीं प्रथम भूपवृक्ष समानशेष भूपवृक्षत्रय संयुक्त समव- सरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।24।

मेरू वृक्ष आग्नेय दिशा में, नैऋत्य में मंदार खड़ा ।
वायव्य में संतान संतति, पारिजात ईशान बड़ा ।।

ॐ ह्रीं षष्ठभूमौ चतुर्विदिशासु मेरूवृक्षादिचतुर्भूपवृक्षसंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।25।

मेरूभूप कल्पवृक्ष जिनपूजा

स्थापना (शंभु छंद)

तुम परम ज्योति तुम परम धाम, परमेश्वर तुम परमात्मा हो ।
तुम भक्तों के हो ज्ञान दीप, सच्चे भक्तों की आत्मा हो ।।
कर्मों के बादल घिर आये, आकर प्रकाश को प्रगटाओ ।
शुभ समवशरण पूजा करते, हृदय में दीप जगा जाओ ।।

ॐ ह्रीं मेरूवृक्ष चतुर्दिशि चतुजिन मन्दिर प्रतिमा अत्र अवतर अवतर संवौषट आह्वानन, अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनं, अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणं।

शंभू छंद

कुछ भेद भाव सा प्रकट हुआ, शुभ धर्म ध्यान में भेद किया ।
धर्मों के तत्व को ना समझा, जल चढ़ा प्रभु का ध्यान किया ।।
आराध्य देव आराधक हम, भावों से पूजा करते हैं ।
राजा मेरू है कल्पवृक्ष, प्रभु दर्शन कर्म को हरते हैं ।।

ॐ ह्रीं मेरूवृक्ष चतुर्दिशि चतुजिन मन्दिर प्रतिमाभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

जीवन का बोझा ढोता हूं, नीती रीति से दूर रहूं ।
चंदन से चरणों को पूजूं, शीतलता दो दुख नाही लहूं ।।
आराध्य देव आराधक हम, भावों से पूजा करते हैं ।
राजा मेरू है कल्पवृक्ष, प्रभु दर्शन कर्म को हरते हैं ।।

ॐ ह्रीं मेरूवृक्ष चतुर्दिशि चतुजिन मन्दिर प्रतिमाभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

पीड़ित है सारी वसुन्धरा, स्थिरता मन में ना होती ।
भावों का अक्षत हम लाये, यह बीज मुक्ति का बो देती ।।
आराध्य देव आराधक हम.....

ॐ ह्रीं मेरूवृक्ष चतुर्दिशि चतुजिन मन्दिर प्रतिमाभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

रागों लिपटा रहता हूं, उसमें ही आनंद आया है ।
सुंदर पुष्पों को हम लाये, विषयों ने ही भटकाया है ।।
आराध्य देव आराधक हम.....

ॐ ह्रीं मेरूवृक्ष चतुर्दिशि चतुजिन मन्दिर प्रतिमाभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्वोत्तम भूख ये मिट जाये, यह भूख तो कर्म कराती है ।
नैवेद्य चरण में रखते हम, यह क्षुधा रोग नशवाती है ।।
आराध्य देव आराधक हम, भावों से पूजा करते हैं ।
राजा मेरू है कल्पवृक्ष, प्रभु दर्शन कर्म को हरते हैं ।।

ॐ ह्रीं मेरूवृक्ष चतुर्दिशि चतुजिन मन्दिर प्रतिमाभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ऋषियों ने आतम ध्यान किया, निज केवल ज्ञान जगाया है ।
यह दीपक ज्ञान चढ़ाते हैं, तम हटा ज्ञान प्रगटाया है ।।
आराध्य देव आराधक हम.....

ॐ ह्रीं मेरूवृक्ष चतुर्दिशि चतुजिन मन्दिर प्रतिमाभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

आठों कर्मों के सर्प डसे, कर्मों की मार भी सहता हूं ।
तपसे कर्मों का धुआं उड़े, अग्नि में धूप मैं खेता हूं ।।
आराध्य देव आराधक हम.....

ॐ ह्रीं मेरूवृक्ष चतुर्दिशि चतुजिन मन्दिर प्रतिमाभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

प्यासी हैं अखियां फल पाये, भक्तों की तुम आवाज सुनो ।
तपके फल फूल चढ़ाते हैं, तुम भक्ति का ही साज सुनो ।।

आराध्य देव आराधक हम.....

ॐ ह्रीं मेरूवृक्ष चतुर्दिशि चतुजिन मन्दिर प्रतिमाभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

मानव में चिंता भरी हुई, भक्ती को न मन शुद्ध हुआ ।
अर्घ्यों का थाल सजा लाये, पाकर के हर्षित आज हुआ ।।
आराध्य देव आराधक हम, भावों से पूजा करते हैं ।
राजा मेरू है कल्पवृक्ष, प्रभु दर्शन कर्म को हरते हैं ।।

ॐ ह्रीं मेरूवृक्ष चतुर्दिशि चतुजिन मन्दिर प्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मंदार भूप कल्पवृक्ष जिनपूजा

स्थापना (त्रिभंगी छंद)

संतोष नहीं, सुख चैन नहीं, नैतिकता मुझसे दूर रहे ।
तप त्याग नहीं, वैराग्य नहीं, निजध्यान जरा भी नाही रहे ।।
भगवान चरण, शुभ समवशरण, हम भक्ति नित ही करते हैं ।
तप त्याग वरण, सब कर्म हरण, पुण्यों से झोली भरते हैं ।।

कल्पवृक्ष मंदार है, जिन पर जिनका वास ।
विश्व वैद्य जिनदेव से, की वरदान आस ।।

ॐ ह्रीं मन्दार भूपवृक्षस्य चतुर्दिशि चतुर्जिन प्रतिमाः अत्र अवतर अवतर संवौषट आह्वानन, अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनं, अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणं।

त्रिभंगी

यह मोह का जाला, आतम काला, निशदिन करता रहता है ।
आतम बिसराया, ज्ञान न आया, कर्मों का फल फलता है ।।
मंदार में भगवन, ज्ञान का उपवन, दर्शन से आशीष मिले ।
कल्पों की छाया, आनंद आया, आतम में शुभ ध्यान पले ।।

ॐ ह्रीं मन्दार भूपवृक्षस्य चतुर्दिशि चतुर्जिन प्रतिमाभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

रत्नत्रय चंदन, ध्यान से वंदन, चरणों में लेकर आया ।
करूणा के सिंधु, हम हैं बिंदु, तुमको सागर सम पाया।।
मंदार में भगवन.....

ॐ ह्रीं मन्दार भूपवृक्षस्य चतुर्दिशि चतुर्जिन प्रतिमाभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

तुम देव विलक्षण, है शुभ लक्षण, अक्षत से पूजा करते ।

उल्लास हमारा, ध्यान तुम्हारा, संकट जीवों के हरते ।।
मंदार में भगवन, ज्ञान का उपवन, दर्शन से आशीष मिले ।
कल्पों की छाया, आनंद आया, आतम में शुभ ध्यान पले ।।

ॐ ह्रीं मन्दार भूपवृक्षस्य चतुर्दिशि चतुर्जिन प्रतिमाभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

रागों की उलझन, तपसे सुलझन, दर्शन से यह जान लिया ।
पुष्पों की माला, लाया लाला, पूजा का सुख पाय लिया ।।
मंदार में भगवन.....

ॐ ह्रीं मन्दार भूपवृक्षस्य चतुर्दिशि चतुर्जिन प्रतिमाभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

ये तन का भोजन, इन्द्रिय भोजन, तृप्ति न दे पाता है ।
नैवेद्य चढ़ाऊं, शरण में आऊं, सुख शांति को पाता है ।
मंदार में भगवन.....

ॐ ह्रीं मन्दार भूपवृक्षस्य चतुर्दिशि चतुर्जिन प्रतिमाभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जग मग है ज्योति, ज्ञान का मोती, हृदय उजाला करता है ।
दीपक की थाली, इसमें लाली, यह अंधियारा हरता है ।।
मंदार में भगवन.....

ॐ ह्रीं मन्दार भूपवृक्षस्य चतुर्दिशि चतुर्जिन प्रतिमाभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मों की लीला, ज्ञान रसीला, संकट सारे शीघ्र हरो ।
यह धूप समर्पित, भाव है अर्पित, कर्मों का तुम ध्वंस करो ।।
मंदार में भगवन, ज्ञान का उपवन, दर्शन से आशीष मिले ।
कल्पों की छाया, आनंद आया, आतम में शुभ ध्यान पले ।।

ॐ ह्रीं मन्दार भूपवृक्षस्य चतुर्दिशि चतुर्जिन प्रतिमाभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

फल फूल सुहाते, स्वयं ही खाते, हरदम जी ललचाता है ।
पर कर्मों का फल, इसका न हल, आतम में बच पाता ।।
मंदार में भगवन.....

ॐ ह्रीं मन्दार भूपवृक्षस्य चतुर्दिशि चतुर्जिन प्रतिमाभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

आनंद झरोखा, ज्ञान अनोखा, अमृत तुम बरसाते हो ।
मैं अर्घ्य चढ़ाऊं, ध्यान लगाऊं, मुक्ती पथ बतलाते हो ।।
मंदार में भगवन.....

ॐ ह्रीं मन्दार भूपवृक्षस्य चतुर्दिशि चतुर्जिन प्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इति मंदार वृक्षस्थ जिनपूजा समाप्त इत्याशीर्वाद पुष्पांजलि

संतान भूप कल्पवृक्ष जिनदेव पूजन

(वायव्य दिशा)

स्थापना

दोहा

जिनवर के दर्शन करें, समवशरण में जाये ।
कल्पवृक्ष संतान है, शत् शत् शीश नवाये ।।

ॐ ह्रीं सन्तान भूप वक्षस्य चतुर्दिशाना जिन प्रतिमाः अत्र अवतर अवतर संवौषट आह्वानन, अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनं, अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणं।

शेर चाल (हे दीन बंधू)

हे विश्वदेव वंद्य विश्व देव शरण आये हैं ।
गुणगान करें, पूजा करें, नीर लाये हैं ।।
ये कल्पवृक्ष प्राणीयों को दान देते हैं ।
संतान के जिन देव का भी दर्श लेते हैं ।।

ॐ ह्रीं वायव्य दिशायाः सन्तान भूपवृक्षस्य जिन प्रतिमाभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

संसार में ईर्ष्याग्नि से जलता रहा सदा ।
ले चंदनादि भाव सहित पूजता मुदा ।।
ये कल्पवृक्ष प्राणीयों को दान देते हैं ।
संतान के जिन देव का भी दर्श लेते हैं ।।

ॐ ह्रीं वायव्य दिशायाः सन्तान भूपवृक्षस्य जिन प्रतिमाभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

सुनता रहा उपदेश किन्तु ज्ञान न किया ।
मैं अक्षत से पूजता हूं, हर्षमय जिया ।।
ये कल्पवृक्ष प्राणियों.....

ॐ ह्रीं वायव्य दिशायाः सन्तान भूपवृक्षस्य जिन प्रतिमाभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

रिश्तों की डोरियों में बंध राग मैं फंसा ।
रोता हूं कर्म के उदय कर्मों की है सजा ।।
ये कल्पवृक्ष प्राणियों.....

ॐ ह्रीं वायव्य दिशायाः सन्तान भूपवृक्षस्य जिन प्रतिमाभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

खाता रहा पीता रहा, पर अंत न पाया ।

होकर करके दु:खी हे, प्रभो मैं पूजने आया ।।
ये कल्पवृक्ष प्राणीयों को दान देते हैं ।
संतान के जिन देव का भी दर्श लेते हैं ।।

ॐ ह्रीं वायव्य दिशायाः सन्तान भूपवृक्षस्य जिन प्रतिमाभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

न ज्ञान का दीपक जला, अंधेरे में भटका ।
मोही बना पिटता रहा मैं मोह में अटका ।।
ये कल्पवृक्ष प्राणियों.....

ॐ ह्रीं वायव्य दिशायाः सन्तान भूपवृक्षस्य जिन प्रतिमाभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मों की श्रृंखला पड़ी है पांव में मेरे ।
मैं धूप चढ़ा अर्ज करूं चरण में तेरे ।।
ये कल्पवृक्ष प्राणियों.....

ॐ ह्रीं वायव्य दिशायाः सन्तान भूपवृक्षस्य जिन प्रतिमाभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

अच्छा करूं अच्छा मिले, ऐसा ही है होता ।
पूरब में किये कर्म के, फल आज भी पाता ।।
ये कल्पवृक्ष प्राणियों.....

ॐ ह्रीं वायव्य दिशायाः सन्तान भूपवृक्षस्य जिन प्रतिमाभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

चरणों का मिले आसरा, मैं ध्यान लगाऊं ।
पा मुक्ति का ये रास्ता मैं अर्घ्य चढ़ाऊं ।।
ये कल्पवृक्ष प्राणीयों को दान देते हैं ।
संतान के जिन देव का भी दर्श लेते हैं ।।

ॐ ह्रीं वायव्य दिशायाः सन्तान भूपवृक्षस्य जिन प्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इति सन्तान भूप वृक्षस्य जिन पूजा समाप्त इत्याशीर्वादं

पारिजात भूप कल्पवृक्ष जिनपूजन

(ईशान दिशा)

स्थापना

कल्पवृक्ष की भूमि में, भूप वृक्ष परमान ।
पारिजात शुभ नाम है, विदिशा में ईशान ।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिशिपारिजात भूप वृक्षस्य जिनप्रतिमाः अत्र अवतर अवतर संवौषट आह्वानन, अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनं, अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणं।

गीता छंद

अज्ञान मल यह दूर होवे, ज्ञान जल को ले लिया ।
निज आत्म गंगा जल नहाये, भव को शुभ यह कर लिया ।।
यह पारिजात वृक्ष सुंदर, जिन वहां पर दर्श दे ।
जिनवर महल जा पूजते, आतम यहां पर हर्ष ले ।।

ॐ ह्रीं ईशान दिशि पारिजात भूप वृक्षस्य जिनप्रतिमाभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

सब ताप शीतल ही बने, निज आत्म दर्शन को करूं ।
तेरे चरण को पूजकर, निज आत्म सिद्धि को वरूं ।।
पारिजात के वृक्ष सुंदर.....

ॐ ह्रीं ईशान दिशि पारिजात भूप वृक्षस्य जिनप्रतिमाभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्द्र सम उज्जवल अखंडित, अक्षतों का थाल है ।
आत्मा उज्ज्वल बने, यह पाप जंजाल है ।।
पारिजात के वृक्ष सुंदर.....

ॐ ह्रीं ईशान दिशि पारिजात भूप वृक्षस्य जिनप्रतिमाभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

चारों गति में वासना का, जाल है फैला हुआ ।
ये ही जग में है घुमाये, आत्म धन को ना छुआ ।।
यह पारिजात वृक्ष सुंदर, जिन वहां पर दर्श दे ।
जिनवर महल जा पूजते, आतम यहां पर हर्ष ले ।।

ॐ ह्रीं ईशान दिशि पारिजात भूप वृक्षस्य जिनप्रतिमाभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

भोज्य यह न पेट भरता, न किन्तु मन ही शान्त हो ।
तन मन प्रभुवर भूख मेटो, आतम प्रभा प्राशांत हो ।।
पारिजात के वृक्ष सुंदर.....

ॐ ह्रीं ईशान दिशि पारिजात भूप वृक्षस्य जिनप्रतिमाभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जब ज्ञान न हो अंध बनते, कर्म गति में जा फिरे ।
जग मग जगे जब ज्ञान दीपक, तो जगत का तम हरे ।।
पारिजात के वृक्ष सुंदर.....

ॐ ह्रीं ईशान दिशि पारिजात भूप वृक्षस्य जिनप्रतिमाभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

दृष्टी न अध्यात्म में, अभिमान ये झुकता नहीं ।

परद्रव्य में ही रत रहा, निज में कभी टिकता नहीं ।।
यह पारिजात के वृक्ष सुंदर, जिन वहां पर दर्श दे ।
जिनवर महल जा पूजते, आतम यहां पर हर्ष ले ।।

ॐ ह्रीं ईशान दिशि पारिजात भूप वृक्षस्य जिनप्रतिमाभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

कल्पना में मोक्ष चाहूं, पर नहीं चारित्र है ।
शुभ कार्य ही शुभ फल को देते, धर्म सबका मित्र है ।।
पारिजात के वृक्ष सुंदर.....

ॐ ह्रीं ईशान दिशि पारिजात भूप वृक्षस्य जिनप्रतिमाभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्वोपरि है सिद्ध पदवी, जिनकी हम पूजा करें ।
औं अर्घ्य चरणों में चढ़ाऊं, कर्म सारे वे हरें ।।
पारिजात के वृक्ष सुंदर.....

ॐ ह्रीं ईशान दिशि पारिजात भूप वृक्षस्य जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अथ चारों भूप वृक्ष संबंधी जयमाला

छटवी भूमी वृक्ष की, सुंदरता गुणखान ।
मनवच काया से सुनो, बारंबार प्रणाम ।।

पद्धरि छंद

जय मेरूवृक्ष उत्तम सुजान, वृक्षों में राजा के समान ।
शीतलमयी तरूवर की छाया मेरू वृक्षों की शुभ माया ।।
चारों दिश में है चार मान, जिनवर बैठे जिनपर महान ।
जय गंध कुटी शुभ गंध देय, जग मग जोती तम को हरेय ।।
रत्नोंमय सिंहासन प्यारा, प्रभु रूप दिव्य शोभे न्यारा ।
वृक्षों ने छाया फैलाई, भक्तों ने छाया है पाई ।।
जय चमर ढुरे आनंद देय, उज्जवल कांती मनको हरेय ।
अठ प्रातीहार्य शोभा बढ़ाये, चरणों में आकर सिर नवाये ।।
देवों ने प्रभु गुणगान किया, जिनवर का शुभ सम्मान किया ।
पूजा भक्ति में ताल देय, सब हरष-हरष ता थेई करेय ।।
इक भूप वृक्ष इक दिशा होय, चारों दिश में जिन दर्श देय ।
जिन मंदिर सोलह दर्श जायें, पापों के मेघों को हटाये ।।
दर्शन से तत्क्षण पाप नष्ट, मिट जाये सारे दुःख कष्ट ।
चारों गतियों में घूम रहे, मोही बनकर के झूम रहे ।।

आठों कर्मों ने लिया घेर, आठों कर्मों ने किया ढेर ।
कर्मों की लीला न्यारी है, कर्मों की ही तैयारी है ।।
ये कर्म-कर्म बुलवाते, जीवों के नाच नचाते हैं ।
तुमने कर्मों को छोड़ा है, कर्मों से नाता तोड़ा है ।।
संकल्प हमें भी लेना है, तप में ही ध्यान को देना है ।
तप अग्नि में ही कर्म जरे, तप कर्मों के ही मेघ हरे ।।
तप द्वारा तुमको पाना है, चरणों तेरे आना है ।
'स्वस्ति' गुणगान को गाती है, चरणों में शीश झुकाती है ।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिशि पारिजात भूप वृक्षस्थ जिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

समोवशरण का दर्श है, तीर्थंकर भगवान ।
है कर्म बंध से छूटकर, पहुंचू शिवपुर धाम ।।
प्रीती चरणों से करूं, चरण नहीं शिवधाम ।
चरण शरण को पायेकर, बारम्बार प्रणाम ।।

सप्तम भूमि वर्णन प्रारंभ

शंभु

सप्तम भूमी स्तूप बने, रत्नों मय राशि शोभित है ।
शुभ समवशरण सुंदर रचना, लख भविजन होते मोहित हैं ।।
शुभ द्वार सु सुंदर चौथी वेदी, समवशरण में साज रही ।
कंगुरा लटके घंटी बाजे, उपमा अद्भुत राज रही ।।

ॐ ह्रीं सप्तम भूमि गल्यास्तूप काम दक्षिणभागे अन्तर गल्या: द्वारे आभ्यन्त: चतुर्थ वेदिका संयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।1।

चौपाई

वेदी में चित्रों की रचना, पाप करम से ही है बचना।
चित्र यहां पर ज्ञान सिखाये, दर्शन कर सबही मुस्काये ।।

ॐ ह्रीं विविधचित्रयुक्तचतुर्थवेदिकासंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।2।

मुनिवर ध्यान लगाकर ठाड़े, सर्दी गर्मी या हो जाड़े ।

पर्वत पर जा ध्यान लगाया, ऐसे चित्र ने ज्ञान सिखाया ।।

ॐ ह्रीं सप्तमभूमौ चतुर्थवेदिका चतुर्थशालमध्ये धर्मोपदेशकयति चित्रसंयुक्तसमवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।3।

चलते हुए भूमि वे देखे, चलते-चलते आतम लेखे ।
आतम से आतम में रहते, आतम में रह परिषह सहते ।।

ॐ ह्रीं सप्तमभूमौ चतुर्थवेदिका चतुर्थशालमध्ये आत्मलीन दिगम्बरयतिसंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।4।

लौकान्तिक वैराग्य बढ़ाये, ऐसे सुंदर चित्र दिखाये ।
नभ में मेघ घटा उठ आई, दिव्य दिवाकर छिपता भाई ।।

ॐ ह्रीं सप्तमभूमौ नानाविधिचित्रचित्रितचतुर्थवेदिकासंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।5।

जो सूरज आकाश में चमके, धरती पर उजियारा दमके ।
सप्त रंग का धनुष बना है, मानो सुंदर धनुष तना है ।।

ॐ ह्रीं सप्तमभूमौ चतुर्थशालचतुर्भागस्वेतवर्णचतुर्थवेदिका संयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।6।

मेघ ही नभ में काले-काले, बिजली चमके हो उजियाले ।
चित्र प्रकृति के रंग दिखाये, इन सबमें वैराग्य बढ़ाये ।।

ॐ ह्रीं सप्तमभूमौ द्वाविंशतिभागवलयव्यासंयुक्त मन्दिर- षड्क्तिसंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।7।

चौथा कोट श्वेत रंग भायो, चौथी वेदी को दर्शाओ ।
हीरा जिन मंदिर चमकाये, इन्द्र महल आकर बनवाये ।।

ॐ ह्रीं सप्तमभूमौ विविधरचनायुक्त जिनमन्दिरसंयुक्त समव- सरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।8।

पंक्ति में तब मन्दिर सोहे, वलय व्यास बाईस भी मोहे ।
स्वर्ण खंभ हीरे के जड़े, मंदिर के आगे हैं खड़े ।।

ॐ ह्रीं एवम्बिधानेकरचनासंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।9।

बैठक में भक्तों का मेला, देव देवियां करती रेला ।
परदा मोती झालर शोभे, विद्याधर सबका मन मोहे ।।

ॐ ह्रीं सप्तभूमौ मन्दिर मध्यचतुष्कोपरिमण्डपसंयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।10।

ऊंचे-ऊंचे शिखर सुहाने, कलशा सुंदर लगे चढ़ाने ।
उस पर ध्वजा लहर लहराये, मानो भव्य को पास बुलाये ।।

ॐ ह्रीं सप्तभूमौ मध्यचतुष्कोपरि मण्डपसंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।11।

मंदिर बहुत भक्त बहु आवे, सब में अपनी भक्ति दिखावे ।
बीन बजा सुरताल मिलावे, ले मृदंग ऊंचे स्वर गावे ।।

ॐ ह्रीं सप्तभूमौ मध्यचतुष्कोपरि मण्डपसंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।12।

नृत्य करे जिनवर के आगे, पाप वहां से शीघ्रही भागे ।
महिमा भगवन सुर नर गावे, तो भी न पूरी हो पावे ।।

ॐ ह्रीं सप्तभूमौ श्री मण्डपसंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।13।

दोहा

मंदिर मध्य में देखिये, चौक है कुरसीदार ।
रत्न जड़ित सोपान है, होवे नित्य बहार ।।

ॐ ह्रीं सप्तभूमौ श्रीमण्डपे केवलिजिनसंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।14।

एक सहस खम्बों बने, ऊपर चौक प्रमाण ।।
मंडप सुंदर साजता, बारंबार प्रणाम ।।

ॐ ह्रीं सप्तभूमौ श्रीमण्डपे श्रुतकेवलिसंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।15।

द्वार जहां तोरण बने, सुंदर रत्नों माल ।
झक झक ज्योति होत है, पुष्प बनेगा लाल ।।

ॐ ह्रीं सप्तभूमौ विविधरचनासंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।16।

गंध कुटी सुंदर सुभग, त्रय सिंहासन धार ।
तीन छत्र शिरपर फिरे, केवल ज्ञान बहार ।।

ॐ ह्रीं सप्तमभूमौ युक्तविविधरचनासंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।17।

श्री मंडप श्रुत केवली, देते ज्ञान महान ।
ज्ञान दीप जलता वहीं, बारम्बार प्रणाम ।।

जिनवाणी की वाणी को, जन जन देय सुनाय ।
श्री मंडप शुभ भूमी हैं, 'स्वस्ति' भव्य ही आय ।।
जितना हमको ज्ञान था, उतने लेख लिखाये ।
वचन न पूरण कह सके, प्रभुवर गुण प्रगटाये ।।

ॐ ह्रीं संयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।20।

अथ केवल ज्ञान पूजा

दोहा

स्थापना (शंभु छंद)

चार घातिया घात के स्वामी, केवलज्ञान को पाया है ।
सप्तम भूमी में आन विराजे, आतम आनंद छाया है ।।
सुरनर मिल सब पूजा करते, मुझको भी ज्ञान का दान मिले ।
केवलज्ञानी मैं बन जाऊं, आतम आनंद का फूल खिले ।।

ॐ ह्रीं केवलज्ञान संयुक्तजिनेन्द्र अत्र अवतर अवतर संवौषट आह्वानन, अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनं, अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणं।

छंद जोगी रासा

मम ज्ञान पे परदा डाले करम, सच्चा मुझको न ज्ञान हुआ ।
अच्छी बातों को भूल जाये, निर्मल होने को जल लाये कुआं ।।
केवलज्ञानी केवल धारक, केवल पाने पूजा करते ।
शुभ समवशरण में आकर के, चरणों में मस्तक हम धरते ।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्य केवलि जिनप्रतिमाभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चक्षु से आतम न दिखता, आतम दर्शन हो ध्यानी को ।
शुद्धोपयोग में लीन होय, शीतल आनंद हो ज्ञानी को ।।
केवलज्ञानी केवल धारक.....

ॐ ह्रीं समवशरणस्य केवलि जिनप्रतिमाभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मों का फल सुख दुःख होता, सुख दुःख में हंसते रोते हैं ।
पुरूषार्थ करें निज भक्ति का, अक्षय आतम को पाते हैं ।।
केवलज्ञानी केवल धारक.....

ॐ ह्रीं समवशरणस्य केवलि जिनप्रतिमाभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

हर वस्तु से जग मोह करे, मोही माया का जाल कसे ।
कर्मों के राजा बन बैठे, पुष्पों सम रोते और हंसे ।।
केवलज्ञानी केवल धारक, केवल पाने पूजा करते ।
शुभ समवशरण में आकर के, चरणों में मस्तक है धरते ।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्य केवलि जिनप्रतिमाभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

चारों गतियों में बंधन है, यह आयु कर्म का खेल रहा ।
हर गति में बस भोजन कीना, सम्यक् पुरूषारथ नही गहा ।।
केवलज्ञानी केवल धारक.....

ॐ ह्रीं समवशरणस्य केवलि जिनप्रतिमाभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तन चित्र विचित्र बने नूतन, मर मर के तन को धरते हैं ।
बाहर देखे अंदर तम है, दीपक से पूजा करते हैं ।।
केवलज्ञानी केवल धारक.....

ॐ ह्रीं समवशरणस्य केवलि जिनप्रतिमाभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

ऊंचा नीचा है कर्म करें, ऊंचा बन नीचा काम किया ।
कर्मों का धुआं उड़ाने को, प्रभुवर तेरा है नाम लिया ।।
केवलज्ञानी केवल धारक, केवल पाने पूजा करते ।
शुभ समवशरण में आकर के, चरणों में मस्तक हम धरते ।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्य केवलि जिनप्रतिमाभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

दूजे को अगर सुखी देखूं, ईर्ष्या में मन जलता रहता ।
कर्मों के फल को ना जाने, जग के दुख को सहता रहता ।।
केवलज्ञानी केवल धारक.....

ॐ ह्रीं समवशरणस्य केवलि जिनप्रतिमाभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

विघ्नों ने कार्य बिगाड़ा है, यह अंतराय निज शत्रु बना ।
अर्घ्यों का थाल चढ़ाऊं मैं, छाया कर्मों का मेघ घना ।।
केवलज्ञानी केवल धारक.....

ॐ ह्रीं समवशरणस्य केवलि जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा

जय पाने जय बोलते, जयमाला गुणखान ।
केवल ज्ञान ही जय करे, शत् शत् बार प्रणाम ।।

पद्धरि छंद

हे परम ज्ञान है परम ध्यान, है परम पिता तुमको प्रणाम ।
तुम विश्व वंद्य तुम विश्व जीत, प्रभुवर तुम सबके हुये मीत ।।
घर वैभव तज तुम जोग धरा, आतम में आनंद ज्ञान भरा ।
तुम मात-पिता का मोह तजा, आतम से आतम राम भजा ।।
वस्त्राभूषण जग को दीना, गुण आभूषण धारण कीना ।
हिंसा त्यागी तपको धारा, कर्मों का राजा भी हारा ।।
तुम क्रोध से है नाता तोड़ा है, तुम क्षमा भाव को जोड़ा है ।
माया की छाया दूर रहे, बाहर जाकर के कपट सहे ।।
संयम के फूल खिलाये हैं, गुण चिंतन जब प्रगटाये हैं ।
यह धर्म अहिंसा प्यारा है, सबको दीना यह नारा है ।।
तप सत्य मयी तुम वाणी है, जीवों की जग कल्याणी है ।
ग्रह भी विग्रह को न करते, चरणों में आकर के झुकतें ।।

तीर्थंकर के ही पास रहे, प्रभु के अतिशय दिन-रात बहे ।
रचना कुबेर ही करता है, शुभ समवशरण को भरता ।।
हीरा-मोती पन्ना मुक्ता, है सर्वश्रेष्ठ वे ही वक्ता ।
स्फटिक मणी दिवाल बनी, देवों की आई भीड़ घनी ।।
द्वारे पर मानस्तम्भ बना, मानी जन का सब मान गला ।
सीढ़ी पर अतिशय होता है, पग धरते दर्शन होता है ।।
रोगी रोगों को खोता है, पुण्यों का नर्तन होता है ।
केवलज्ञानी अतिशय कारी, यह ज्ञान की महिमा है न्यारी ।।
दर्पणवत् ज्ञान में दिखता है, आतम का स्वाद भी चखता है ।
भगवन मेरी विनती सुनना, 'स्वस्ति' के मन हर क्षण रहना ।।

ॐ ह्रीं सप्तम भूमौ केवलज्ञान जिनेन्द्राय पूर्णार्घं निर्व. स्वाहा।

दोहा

निर्मोही जिन देव तुम, मोहे हैं जग जीव । चरण शरण जब भी मिले, सम्यग्दर्शन नीव ।।
दर्पणवत् तुम ज्ञान है, राग रहे न द्वेष । वीतरागता के धनी, वीतरागता वेश ।।

।। इत्याशीर्वाद ।।

नवस्तूप पूजा (पूरब दिशा)

स्थापना

गीता छंद

प्राची दिशा में लालिमा, जग को अजब संदेश दे,
जागो उठो हे भोले प्राणी, यह नया उपदेश दे ।
पूरब दिशा स्तूप नव है, जिनप्रभु जी राजते,
हो सौख्य धन शांति सभी को, कर्म सब ही भाजते ।।

ॐ ह्रीं पूर्व दिश नवस्तूप जिन प्रतिमा अत्र अवतर अवतर संवौषट आह्वानन, अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनं, अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणं।

चौपाई

जल ने मल को दूर हटाया, ज्ञान ने जल का कार्य निभाया ।
कर्म मैल मेरा धुल जावे, नवस्तूप की पूजा गावे ।।

ॐ ह्रीं पूर्व दिश नवस्तूप जिन प्रतिमामाभ्यः जलं निर्व. स्वाहा।

चंदन चंदा सम शीतल है, कर्म ताप सम जीवन हल है ।
चंदन सम शीतलता पावे, नवस्तूप की पूजा गावे ।।

ॐ ह्रीं पूर्व दिश नवस्तूप जिन प्रतिमाभ्यः चन्दनं निर्व. स्वाहा।

उज्जवल अक्षत कर में लाया, अक्षत सम तुमको है पाया ।
अक्षय पद पाने को आवे, नवस्तूप की पूजा गावे ।।

ॐ ह्रीं पूर्व दिश नवस्तूप जिन प्रतिमाभ्यः अक्षतं निर्व. स्वाहा।

पुष्पों ने जग जीव लुभाया, काम बाण में उन्हें फंसाया ।
शुद्ध भाव मेरा हो जावे, नवस्तूप की पूजा गावे ।।

ॐ ह्रीं पूर्व दिश नवस्तूप जिन प्रतिमाभ्यः पुष्पं निर्व. स्वाहा।

पेट भरा खाली हो जावे, बार-बार भोजन को खावे ।
क्षुधा रोग को शीघ्र मिटावे, नवस्तूप की पूजा गावे ।।

ॐ ह्रीं पूर्व दिश नवस्तूप जिन प्रतिमाभ्यः नैवेद्यं निर्व. स्वाहा।

मोह अंध कुछ न सच दीखा, सम्यग्ज्ञान न लागे नीका ।
आतम में उजियाला होवे, नवस्तूप की पूजा गावे ।।

ॐ ह्रीं पूर्व दिश नवस्तूप जिन प्रतिमाभ्यः दीपं निर्व. स्वाहा।

आठो कर्म महादुख दायी, कर्मों के मारे सब भाई ।
कर्मों के पर्वत को तोड़ो, नवस्तूप से नाता जोड़ो ।।

ॐ ह्रीं पूर्व दिश नवस्तूप जिन प्रतिमाभ्यः धूपं निर्व. स्वाहा।

आतम ज्ञानी आनंद पावे, आतम के फल मिष्ट ही भावे ।
आतम में आतम खो जाये, नवस्तूप की पूज कराये ।।

ॐ ह्रीं पूर्व दिश नवस्तूप जिन प्रतिमाभ्यः फलं निर्व. स्वाहा।

द्रव्यों की थाली भर लाया, शुभ भावों से तुम्हें चढ़ाया ।
शिव सुख वासी तेरा धाम, नवस्तूप को करें प्रणाम ।।

ॐ ह्रीं पूर्व दिश नवस्तूप जिन प्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

नवस्तूप पूजा (दक्षिण दिशा)

स्थापना

गीता छंद

निज आत्मा में लीन हो, निज ज्ञान धन को पा लिया ।
आराधना हम सब करें, आनंद अनुभव आ लिया ।।
दक्षिण दिशा स्तूप नव है, जिन प्रभु जी राजते ।
हो सौख्य धन शांति सभी को, कर्म सब ही भाजते ।।

ॐ ह्रीं दक्षिण दिश नवस्तूप जिन प्रतिमा अत्र अवतर अवतर संवौषट आह्वानन, अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनं, अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणं।

दोहा

जल मल को धोवे सदा, जल सम हो मम भाव ।
नवस्तूप को पूजते, पार लगेगी नाव ।।

ॐ ह्रीं दक्षिण दिश नवस्तूप जिन प्रतिमाभ्यः जलं निर्व. स्वाहा।

चंदन से वंदन करें, शीतल भाव बनायें ।
नवस्तूप को पूजने, चरणों में हम आये ।।

ॐ ह्रीं दक्षिण दिश नवस्तूप जिन प्रतिमाभ्यः चन्दनं निर्व. स्वाहा।

क्षत विक्षत होता रहा, अक्षय का दो दान ।
नवस्तूप को पूजते, बारंबार प्रणाम ।।

ॐ ह्रीं दक्षिण दिश नवस्तूप जिन प्रतिमाभ्यः अक्षतं निर्व. स्वाहा।

जीव पुष्प को चाहते, पर यह तो मुरझाये ।
संयम बगिया खिल उठे, चरणों शीश झुकायें ।।

ॐ ह्रीं दक्षिण दिश नवस्तूप जिन प्रतिमाभ्यः पुष्पं निर्व. स्वाहा।

भूख लगी भोजन किया, नहीं किया निज पान ।
नैवेद्यों से पूजते, कर स्तूप का ध्यान ।।

ॐ ह्रीं दक्षिण दिश नवस्तूप जिन प्रतिमाभ्यः नैवेद्यं निर्व. स्वाहा।

ज्योति सदा जलती रहे, फैले भा चहुं ओर ।
दीप चरण में भेंटता, होगा ज्ञान का भोर ।।

आठों कर्म का ठाठ है, धर्म हुआ मम दूर ।
अष्ट कर्म के नाशने, ज्ञान होय भरपूर ।।
ॐ ह्रीं दक्षिण दिश नवस्तूप जिन प्रतिमाभ्यः धूपं निर्व. स्वाहा।

फल से फल की चाह है, मुक्ती फल मिल जाये ।
नवस्तूप को पूजते, शत्-शत् शीश झुकाये ।।
ॐ ह्रीं दक्षिण दिश नवस्तूप जिन प्रतिमाभ्यः फलं निर्व. स्वाहा।

पद अनर्घ्य है सुख भरा, जग है दुख भंडार ।
नवस्तूप को पूजते, मिले प्रभु का प्यार ।।
ॐ ह्रीं दक्षिण दिश नवस्तूप जिन प्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

नवस्तूप पूजा (पश्चिम दिशा)

स्थापना

गीता छंद

मम साधना आराधना, प्रभु भक्ति है तेरे लिये ।
तेरे चरण ही पूजना, बस श्रद्धा है तेरे लिये ।।
पश्चिम दिशा स्तूप नव है, जिन प्रभु जी राजते ।
हो सौख्य धन शांति सभी को, कर्म सब ही भाजते ।।

ॐ ह्रीं पश्चिम दिश नवस्तूप जिन प्रतिमा अत्र अवतर अवतर संवौषट आह्वानन, अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनं, अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणं।

शंभु छंद

भावों की निर्मलता प्रभुवर, गंगा से भी निर्मल होती ।
जल चरणों में अर्पित करते, मन के भावों को धो देती ।।

ॐ ह्रीं पश्चिम दिश नवस्तूप जिन प्रतिमाभ्यः जलं निर्व. स्वाहा।

ईर्ष्या की अग्नि दाह करे, मन कल-कल बेकल होता है ।
अर्पित है चरणों में चंदन, जो बीज शान्ति का बोता है ।।

ॐ ह्रीं पश्चिम दिश नवस्तूप जिन प्रतिमाभ्यः चन्दनं निर्व. स्वाहा।

अक्षय पद पाने को प्रभुवर, अक्षत की थाली लाया हूं ।
अक्षयपुर वासी बन जाऊं, भावों का पुंज बनाया हूं ।।

ॐ ह्रीं पश्चिम दिश नवस्तूप जिन प्रतिमाभ्यः अक्षतं निर्व. स्वाहा।

मम ज्ञान पुष्पों से चुनकर, भावों के पुष्प मैं ले आया ।
रागों के कांटे दूर हटे, शुभ भावों से मैं भर लाया ।।

ॐ ह्रीं पश्चिम दिश नवस्तूप जिन प्रतिमाभ्यः पुष्पं निर्व. स्वाहा।

देवों ने अमृत पान किया, फिर भी यह क्षुधा सताती है ।
नैवेद्य समर्पित करते हैं, जो आतम शुद्धि लाती है ।।

ॐ ह्रीं पश्चिम दिश नवस्तूप जिन प्रतिमाभ्यः नैवेद्यं निर्व. स्वाहा।

है जनम-जनम का नाता प्रभु, अंधे को राह दिखा देना ।
अर्पित करने दीपक लाया, मुक्ती का मार्ग बता देना ।।

ॐ ह्रीं पश्चिम दिश नवस्तूप जिन प्रतिमाभ्यः दीपं निर्व. स्वाहा।
कर्मों का कैदी बना हुआ, चारों गतियों में घूम रहा ।
कर्मों का धुआं उड़ाने को, मैं चरण तुम्हारे चूम रहा ।।
ॐ ह्रीं पश्चिम दिश नवस्तूप जिन प्रतिमाभ्यः धूपं निर्व. स्वाहा।
अर्पण सब कुछ है कर दीना, फल और नहीं मैं कुछ चाहूं ।
मुक्ती में जाकर वास करूं, इक यही भावना मैं भाऊं ।।
ॐ ह्रीं पश्चिम दिश नवस्तूप जिन प्रतिमाभ्यः फलं निर्व. स्वाहा।
मैं क्या मांगूं प्रभुवर तुमसे, मेरे रोम-रोम में बस जाओ ।
अर्घ्यों की थाली लाया हूं, हृदय में आन समा जाओ ।।
ॐ ह्रीं पश्चिम दिश नवस्तूप जिन प्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

नवस्तूप पूजा (उत्तर दिशा)

स्थापना

गीता छंद

निज आत्मा में लीन हो, निज़ ज्ञान धन को पा लिया ।
आराधना हम सब करें, आनंद अनुभव पा लिया ।।
उत्तर दिशा स्तूप नव है, जिन प्रभु जी राजते ।
हौ सौख्य धन शांति सभी को, कर्म सब ही भाजते ।।

ॐ ह्रीं उत्तर दिश नवस्तूप जिन प्रतिमा अत्र अवतर अवतर संवौषट आह्वानन, अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनं, अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणं।

चौबीसी पूजा

अंधियारा मोह घना, सत्य न दिख पाया ।
जल से मल धोवन हार, मन यह हर्षाया ।।

ॐ ह्रीं उत्तर दिश नवस्तूप जिन प्रतिमाभ्यः जलं निर्व. स्वाहा।

चंदन है प्रभु का ज्ञान, शीतलता देवे ।
आतम शीतलता हो जाये, आतप मिट जावे ।।
ॐ ह्रीं उत्तर दिश नवस्तूप जिन प्रतिमाभ्यः चन्दनं निर्व. स्वाहा।

मिथ्या है जग के कार्य, मंगल आप करें ।
अक्षय पद धारी नाथ, सारे कर्म हरें ।।
ॐ ह्रीं उत्तर दिश नवस्तूप जिन प्रतिमाभ्यः अक्षतं निर्व. स्वाहा।

श्रुत धारा का जिन ज्ञान, भाव स्वभाव करे ।
यह पुष्प चढ़ाऊं नाथ, भाव अभाव करे ।।
ॐ ह्रीं उत्तर दिश नवस्तूप जिन प्रतिमाभ्यः पुष्पं निर्व. स्वाहा।

चुन-चुन नैवेद्य बनाये, चरणों में लाऊं ।
मम क्षुधा रोग नश जाये, नित मस्तक नाऊं ।।
ॐ ह्रीं उत्तर दिश नवस्तूप जिन प्रतिमाभ्यः नैवेद्यं निर्व. स्वाहा।

तमहर रवि देय प्रकाश, तम को दूर करे ।
दीपक ले करता आश, सब अज्ञान हरे ।।

ॐ ह्रीं उत्तर दिश नवस्तूप जिन प्रतिमाभ्यः दीपं निर्व. स्वाहा।

आकुल व्याकुल जग जीव, कर्म सतावत हैं ।
कर्मों की धूम उड़ाये, पथ दर्शावत हैं ।।

ॐ ह्रीं उत्तर दिश नवस्तूप जिन प्रतिमाभ्यः धूपं निर्व. स्वाहा।

निष्काम कल्पतरू आप, फल ही फल देते ।
फल लाया हूं मैं साथ, मुक्ती में रहते ।।

ॐ ह्रीं उत्तर दिश नवस्तूप जिन प्रतिमाभ्यः फलं निर्व. स्वाहा।

दोषों से रहित जिनेश, दोष रहित कर दो ।
मैं अर्घ्य चढ़ाऊं नाथ, झोली को भर दो ।।

ॐ ह्रीं उत्तर दिश नवस्तूप जिन प्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

जयमाला

दोहा- छत्तीसों स्तूप में, जिनवर देव महान ।
गली सातवीं है कहीं, बारंबार प्रणाम ।।

शेर चाल

स्वीकार हो जिनदेव तुम्हें मेरा नमस्कार ।
आराधना औ साधना के देव नमस्कार ।।
सीता सती सोमा सती को तारा नमस्कार ।
अर्पित करूं श्रद्धाके सुमन तुम्हें नमस्कार ।।
छत्तीस हैं चारों दिशा में शोभते रहे ।
भक्तों के आत्मज्ञान को भी मोहते रहे ।।
जिनदेव का जब दर्श हो सम्यक भी दर्श हो ।
जाते ही समोशरण में निज आत्म हर्ष हो ।।
है पूर्व दिशा हो सहस स्तूप धारती ।
द्वारे में दे के दर्श वो भक्तों को तारती ।।
जय पीठ तीन रत्न औ मणियों के हैं बने ।
देते प्रकाश देते ज्ञान पुंज हैं घने ।।
जिनदेव तन से ऊंचा, स्तूप है महान ।
ऊंचा शिखर ध्वजा लगी, शत् बार है प्रणाम ।।

जय मोतियों की झालरों से शोभा है बढ़ी ।
तोरण चढ़े घंटा लगे, हो घंटे की ध्वनि ।।
मंगल वसु है द्रव्य शुद्ध ध्यान से लखो ।
कांति बढ़े शांति बढ़े, जो ध्यान को चखो ।।
अरिहंत देव घात के अरिहंत हैं हुये ।
पाई है दिव्य ज्योति, वे कृतकृत्य है हुये ।।
सब देव देवियां अपार द्रव्य लाय के ।
भक्ती में झूमती हैं, शुद्ध भाव भाय के ।।
मेरा जनम सफल हुआ दर्शन हुआ जिनदेव ।
जब तक न मिले मोक्ष मुझे मैं करूंगी सेव ।।
चिंतामणी हो कल्पतरू तरूं आश पूरी हो ।
चारित्र रत्न पाऊँ साधना भी पूरी हो ।।
तुम चन्द्र हो तुम सूर्य हो पावन हो तुम प्रभो ।
निष्काम हो निर्वेद हो सावन हो तुम प्रभो ।।

भगवान मेरी आत्मा को आके बचाओ ।
ये डूबती है नाव इसे पार लगाओ ।।
हम आश ले के द्वार तेरे आये हैं प्रभो ।
''स्वस्ति'' निजात्म ज्ञान हो ये भाव है विभो ।।
प्रबल भावना है मेरी, दर्शन हो जिनदेव ।
समवशरण में जायके, करूं आपकी सेव ।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिशा सम्बन्धिषट् त्रिंशत्स्तूपस्थ जिनेन्द्रभ्यः पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

उज्जवल आतम को किया, तीर्थंकर भगवान ।
आकर हम पूजा करें, शत्-शत् बार प्रणाम ।।

।। इत्याशीर्वाद ।।

श्री मंडप भूमि पूजन

स्थापना (शंभू छंद)

सम भाव भावना का अवसर, हर प्राणी को मिल जाता है।
वह धन कुबेर रचना करके, सुंदरता बहुत बढ़ाता है।
अष्टम भूमि श्री मंडप है, जिसमें जिनवर जी राज रहे।
आव्हानन करते हम उनका, जो समोशरण में साज रहे।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ चतुर्विंशति जिनेन्द्राय अत्र अवतर अवतर संवौषट आह्वानन, अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनं, अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणं।

तर्ज : चौबीसी पूजा

जल वाह्य मलो को धोय, अन्तर मैला है।
जल से हम पूज रचायें, जिन उजियाला है।
श्री मंडप छाया बैठ, भक्ति नित्य करें ।
जिन ज्ञान किरण मिल जाये, सारे कर्म हरे।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ चतुर्विंशति जिनेन्द्राय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ गंध सुगंध समान, चंदन प्रभु जी हैं ।
करें शीतल ताप नशाय, नंदन प्रभु जी हैं ।
श्री मंडप छाया बैठ, भक्ति नित्य करें ।
जिन ज्ञान किरण मिल जाये, सारे कर्म हरे।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ चतुर्विंशति जिनेन्द्राय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

यह खंड-खंड संसार, हमको ना भाया ।
शुभ शालि अखंडित पुंज, चरणों में लाया ।
श्री मंडप छाया बैठ.....

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ चतुर्विंशति जिनेन्द्राय अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

आकुल व्याकुल परिणाम, इन्द्रिय सुख चाहे ।
पुष्पों से पूज रचाऊं, सत्पथ की राहें ।
श्री मंडप छाया बैठ.....

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ चतुर्विंशति जिनेन्द्राय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

पकवान मनोहर नित्य, निश दिन हम खाते ।

नैवेद्य चढ़ाऊं नाथ, यह तन नश जावे ।।
श्री मंडप छाया बैठ, भक्ति नित्य करें ।
जिन ज्ञान किरण मिल जाये, सारे कर्म हरे।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ चतुर्विंशति जिनेन्द्राय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तम छाया है चहुंओर, पथ में भटके हम ।
दो ज्ञान दीप परकाश, सत्पथ पावे हम ।।
श्री मंडप छाया बैठ.....

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ चतुर्विंशति जिनेन्द्राय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मों का है संसार, कुछ ना कर्म बिना ।
कर्मों की धूप चढ़ायें, कुछ ना धर्म बिना ।।
श्री मंडप छाया बैठ.....

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ चतुर्विंशति जिनेन्द्राय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

अमृत फल है निज ध्यान, स्वाद नहीं लीना ।
फल पाने फल ले आये, चरणों रस भीना ।।
श्री मंडप छाया बैठ.....

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ चतुर्विंशति जिनेन्द्राय फलं निर्वपामीति स्वाहा।

द्रव्यों की थाली भर लाये, शुभ भावों से तुम्हें चढ़ाये,
शिव सुख के वासी बन जायें, तुम चरणन अर्घ चढ़ायें ।
श्री मंडप की छाया पाई, झर आतम शुद्धी हो जाई ।
ज्ञान किरण मिल जाये हमें, बार-बार हम चरण नमें ।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ चतुर्विंशति जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

दोहा

स्वपर भेद विज्ञान से, देखा निज का रूप ।
चौबीसों जिनराज जी सिद्ध शिला के भूप ।।

दोहा

बारह योजन का बना, बारह कोठे जान ।
श्री मंडप के कोठे में, बैठे सकल समाज ।।
आदिनाथ जिनदेव जी, अंतस् ज्ञान प्रकाश ।
ज्ञान ज्योति मन भी जगे, ले आया ये आश ।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री आदिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

विजय वरण करके प्रभु, दिया दिव्य उपदेश ।
साढ़े ग्यारह योजन में, फैला जन-जन वेश ।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री अजितनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

रत्नोमय खंभे लगे, सुंदरता की खान ।
पर निज रूप के सामने, नहि किसी का ध्यान ।।
संभव ने संभव किया, मुक्ति मार्ग अजान ।
पदचिन्हों पर जो चले, मिले मोक्ष स्थान ।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री संभवनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

साढ़े दस योजन हुआ, समोशरण का क्षेत्र ।
लख अभिनंदन रूप को, खुले रहे सब नेत्र ।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री अभिनन्दननाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

सुंदर माला से सजा, समोशरण जिनराज ।
मुरझाते ये फूल ना, है ये प्रभु का राज ।।
दश योजन विस्तृत कहा, सुमतिनाथ स्थान ।

सुर नर मिलकर पूजते, करते हैं हम ध्यान ।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री सुमतिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

शोभा लख निज महल की, आकर्षित है भव्य ।
पापी को ना दर्श दो, नाही होय अभव्य ।।
पद्मप्रभू जिनराज की, महिमा अगम अपार ।
तीन गती के जीव आ, करें धर्म से प्यार ।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री पद्मप्रभ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

अमृतवर्षा हो रही, भव्य करें रसपान ।
श्री मंडप की भूमि में, जावे जीव महान ।।
चित्र बने सुंदर वहां, लख हर्षित है जीव ।
श्री सुपार्श्व के चरण में, पावे सौख्य अतीव ।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री सुपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

गगन बीच चंदा रहे, त्यों श्रीमंडप में देव ।
योजन साढ़े आठ हैं, करूँ चरण की सेव ।।
धन कुबेर रचना करे, संपत्ति स्वर्ग से लाये ।

चन्द्रप्रभु के चरण में, हम सब शीश झुकायें ।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री चन्द्रप्रभ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

अष्ट द्रव्य मंगल सजे, धर्म चक्र मनहार ।
अतिशय कांति के धनी, समोशरण तैयार ।।
पुष्पदंत जिनराज का, अठ योजन का व्यास ।
अर्घ्य चढ़ाऊँ भाव से, कलमल होवे साफ ।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री पुष्पदंत जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

कोटद्वार गोपुर बने, भवन बुलावे पास ।
कंचन मणिमयी रत्न से, फैल रहा परकाश ।।
शीतल-शीतल वचन से, शीतलता का दान ।
शीतल सारे जीव हों, करें आत्म कल्याण ।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री शीतलनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

भामंडल के तेज से, फैला दिव्य प्रकाश ।
सूर्य चन्द्र फीके पड़े, ना दिन हो ना रात ।।
श्रेष्ठ अंश नहीं पूर्ण है, श्री श्रेयांश जिन राज ।

श्रेष्ठ हुये हुये जगत में, नमता सकल समाज ।।
ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री श्रेयांशनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

ऋद्धि धारी मुनीवरा, प्रभु चरण के भक्त ।
ज्ञान सुधारस पान कर, ना जग में आसक्त ।।
देते सम्यक् दान में, वासुपूज्य भगवान् ।
करूँ दर्श प्रत्यक्ष में, बारंबार प्रणाम ।।
ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री वासुपूज्य जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

शंभू छंद

क्रम-से आधा-आधा घटता, छह योजन समोशरण पाया ।
श्री विमलनाथ निर्मल वाणी, पाने चरणों में मैं आया ।।
हो अंत समय में भाव विमल, निर्मल आतम यह हो जावे ।
तैयार रहें हरपल ज्ञानी, बस अंत समाधि मिल जावे ।।
ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री विमलनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

हो आप अनंत नाथ स्वामी, हो सर्व गुणो गुणवान संत ।
महिमा जग में सब गाते हैं, चरणों में मिलेगा मुक्ति पंथ ।।

योजन था साढ़े पांच प्रभु, पर यशगाथा चहुँ ओर हुई ।
श्री अनंत नाथ के दर्शन से, तम हटा ज्ञान की भोर हुई ।।
ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री अनंतनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

फहराते हैं ध्वज चहुँदिश में, मानो जिन का गुणगान करे ।
लहराते हैं वे इसीलिये, भव्यों के सारे कर्म उड़े ।।
श्री धर्मनाथ ने धर्म दिया, धारण करके सब जीव तरे ।
चरणों में अर्घ्य चढ़ाते हैं, सारे कर्मों को शीघ्र हरे ।।
ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

जीवों की चाहत एक ही है, जीवन में शांति छा जावे ।
श्री शान्तिनाथ की छाया में, माया से मुक्ति पा जावे ।।
इच्छा है शान्ति पाने की, श्री शान्तिनाथ की सेव करो ।
चरणों में अर्घ्य चढ़ा करके, काले कर्मों को शीघ्र हरो ।।
ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री शांतिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

शुभ समवशरण में बैठ प्रभु, संदेश धर्म का देते हैं ।
ये भक्त भक्ति में रंग करके, जीवन नैया को खेते हैं ।।

चउ योजन कुंथुनाथ जी का, शुभ समवशरण ही प्यारा था ।
वाणी के पुष्प गिराये जिन, जग में सबसे ही न्यारा था ।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री कुंथुनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

श्री अरहनाथ जी नाश करें, कर्मों का धुआं उड़ाया है ।
अंदर का वैभव प्रगट करें, मुक्ती को पास बुलाया है ।।
संसार से तुम ना डरते हो, नाही संसार रचाते हो ।
जग में रहकर जग से न्यारे, मुक्ती का पाथ दिखाते हैं ।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री अरहनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

आनंदमयी दर्शन तेरा, आनंदमयी ही वाणी है ।
आनंदामृत बरसाते हो, बनजाती वह जिनवाणी है ।।
श्री मंडप पावन वसुन्धरा, सब जीवों में आनंदभरे ।
त्रय योजन का यह समोशरण, अवगुण को सारे शीघ्र हरे ।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री मल्लिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

मुनिसुव्रत व्रत धारण करके, सर्वोत्तम पद को पाया है ।
उत्तम पद के दाता भी हो, फिर उत्तम सौख्य दिलाया है ।।

संसार सिन्धु है गहरा प्रभु, किस तरह पार मैं जाऊँगा ।
दो नाथ सहारा मुझको तो, मैं पास तुम्हारे आऊँगा ।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री मुनिसुव्रतनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

दो योजन का शुभ सवशरण, जीवों को शरणा देता है ।
शुभ समोशरण के परमाणु, मन को भी पावन करता है ।।
औदारिक तन पावन पाया, अन्तिम तन ही यह होता है ।
निर्वाण मिलेगा इसको तज, संसार बीज ना बोता है ।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री नमिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

छह कोश में फैला समोवशरण, श्री नेमिनाथ जी जिनवर के ।
यश गाथा सब मिल गाते हैं, हम भी गुण गाये गुरूवर के ।।
रत्नात्रय ने है पार किया, मैं भी सम्यग्दर्शन पाऊँ ।
आना-जाना जग से छूटे, जग में फिर से मैं ना आऊँ ।।
श्री मंडप में राजुल बैठी, उपदेश प्रभु का सुनती है ।
वैराग्य हुआ दीक्षा लीनी, निज आतम में चित्त धरती है ।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री नेमिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

बस पांच कोश का समोशरण, श्री पार्श्वनाथ जिन ने पाया ।
पारस सबको सोना करते, अब मैं पारस बनने आया ।।
श्री मंडप में है कमठ लाल, दश भव का बैर समाप्त किया ।।
सम्यग्दर्शन धारण करके, अपने कर्मों को शुभ्र किया ।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

चतु कोश हुआ विस्तार प्रभु, जिन समवशरण महिमा न्यारी ।
अंतिम तीर्थंकर श्री महावीर, चंदन बाला तुमने तारी ।।
संग मुनिवर गणधर मोक्ष गये, औ सबको पाथ दिखाया है ।
भावों से अर्घ्य चढ़ाने को, यह भक्त चरण में आया है ।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

दोहा

चौबीसों जिनराज जी, श्री मंडप स्थान ।
चरण शरण आ पूजता, शीघ्र करो कल्याण ।।

परिपुष्पांजलि....इत्याशीर्वाद

जयमाला

त्रिभंगी छंद

प्रभु समवशरण है, त्याग वरण है, महिमा तेरी गायेंगे ।
निज आतम दृष्टि, अमृत वृष्टि, पाकर के हर्षायेंगे।
भूमि श्री मंडप, कर्म का खंडन, सुन वाणी को करते हैं।
भर पुण्य की झोली, मीठी बोली, कर्म निर्जरा करते हैं।

पद्धरि छंद

जय ऋषभ देव है महासंत, भव्यों को दिखाया मुक्ति पंथ।
शुभ समवशरण में राज रहे, प्रभु कमलासन पर साज रहे।
बारह कोठे सुंदर विशाल, आकर बैठे सब वृद्ध बाल ।
अंतर में भक्ति दीप जले, बाहर का सब अभिमान गले ।
उपदेश सभा सुंदर सुरूप, आते है श्रावक और भूप ।
चहुंदिश में चतुमुख दिखता है, यह सभा देव ही रचता है।
मुनिराज प्रथम में राज रहे, ध्वनि सुन कर सुख को पाय रहे।
दूजे में कल्प देवी बैठी, फिर आर्यिका श्राविका हैं देखी ।

ज्योतिष व्यंरतनी भवनवासी, सुरज्योतिष व्यंतर करे आश ।
क्रम-क्रम से बैठै आप आय, फिर देव स्वर्ग के हैं बताय ।
ग्यारह में चक्रवर्ती बैठे, बारह में पशुओं को देखे ।
पशुओं का बैर विरोध मिटे, आपस में मिलते प्रेम दिखे ।
संख्या ना देवी देवों की, संख्या ना नर पशु सेवों की ।
आकुलता तन से दूर रहे, व्याकुलता मन से दूर रहे।
ना भूख लगे ना प्यास लगे, ना राग जगे ना मोह जगे ।
शुभ भाव औ समता है पालन, संयम औ गुप्ती का लालन ।
भामंडल आभा फेंक रहा, शुभ-शुभ परमाणु बांट रहा ।
ना क्रोध आये ना लोभ आये, जिनवर प्रभुवर में मन रमाये ।
ना चोरी है ना डाका है, जिनवर चरणों ही जाना है ।
आतंकित आतम नाही रहा, सशंकित आतम ना झांका ।
अमृत वृष्टि हर क्षण होती, अमृत की नदिया भी बहती ।
जो जायेगा रस पान करे, तन मन का भी संताप हरे ।

त्रिबार ध्वनि भी नित्य खिरे, भव्यों ने सिन्धु पार करे ।
मैं भी चरणों तरने आया, पूजन करके मैं हर्षाया ।
हे नाथ कृपा की दृष्टि करो, हे नाथ दया की वृष्टि करो ।
अब और कहीं ना जाऊंगा, दर्शन पाने नित आऊंगा ।
यह तन मन आज समर्पित है, चरणों में जीवन अर्पित है।
चरणों से दूर नहीं करना, 'स्वस्ति' को भव सिन्धू तरना ।

दोहा- बारह कोठे में चलो, दर्शन प्रभु का पाये ।
परम पिता परमेश को, शत्-शत् शीश झुकाये ।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ चतुर्विंशतिजिन पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु प्रत्यक्ष में दर्श, धन्य होय यह जीव ।
आंखों पावन होयेगी, मिलता सौख्य अतीव ।

।इत्याशीर्वाद पुष्पांजलि क्षिपेत।

श्री मंडप वर्णन प्रारंभ

चौपाई

चौथा कोट वज्रमय जानो, हीरा जैसी कांती मानो ।
जिन तनु से चौगुना है ऊंचा, एक भाग मोटाई जैसा ।।

ॐ ह्रीं जिन तनुतः चर्तुगुणोत्तुनाकभागायत वज्रमय श्वेत वर्ण चतुर्थ प्राकार संयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।1।

कोटों से किरणें हैं निकले, जग मग जग मग ज्योति दमके ।
रात दिना का भेद न होता, पंच वर्ण रत्नों का गोता ।।

ॐ ह्रीं चतुर्थप्राकारप्रबद्धकान्तिसंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।2।

कंगूरा ध्वज महल सहित है, रागद्वेष मद मोह रहित है ।
सभी जगह सोपान लगे है, स्वर्णमयी कलशा ही जड़े है ।।

ॐ ह्रीं चतुर्थप्राकारवुरज कंगूरा ध्वजासुशोभित विष्ठरविशिष्ट सप्तम-सोपानसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।3।

चढ़े सोपान चौक में जावे, मणिमयी चौक भी शोभा पावे ।
चौक छोड़ के कोट वज्र है, द्वार खड़े हैं हमें सब्र है ।।

ॐ ह्रीं द्वारयुक्तचतुर्थ प्राकारसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।4।

द्वार पै तोरण शोभा पाये, दर्शन को सब देव ही आये ।
पन्ना रत्न के हार बने हैं, झलके चित्र सुसौम्य सने हैं ।।

ॐ ह्रीं अनेकरचनायुक्तद्वारसहित चतुर्थप्राकारसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।5।

द्वारपाल द्वारे पर बैठे, गदा हाथ ले सबको देखे ।
सुंदर लख हम सब हर्षाये, पूजा को प्रभु भक्त हैं आये ।।

ॐ ह्रीं द्वारपालसहितद्वारयुक्त चतुर्थप्राकारसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।6।

कान में कुंडल हार हृदय में, कड़ा हाथ मुंदरी अंगुली में ।
द्वारपाल शिर मुकुट चढ़ाये, पद्मराग मणि कांती बढ़ाये ।।

ॐ ह्रीं द्वारपालयुक्तद्वारसहित पंचमवेदिकायुक्तचतुर्थप्राकार संयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।7।

नये वस्त्र धारण हैं कीना, अलग शोभता रत्न नगीना ।
पांचवीं वेदी बनी है सुंदर, प्रभुवर बैठे जिसके अन्दर ।।

ॐ ह्रीं वज्रप्राकारपंचमवेदिकायाः अष्टमगल्याः भूमौ उभयपार्श्व

भूमेः चतुरन्तराल संयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।8।

पंचम कोटी वज्र कोट है, भूमी आठवीं बनी ओट है ।
गली भूमी बाईं में जाओ, भूमी में चतु अंतर पायो ।।
द्वादश शाल प्रकोष्ठ की रचना, ध्यान लगा आतम सुख चखना ।
घंटा कलशा ध्वजा भी शोभे, दूर से ही सबका मन मोहे ।।

ॐ ह्रीं अष्टमभूमौ विविधरचनायुक्तद्वादशशालप्रकोष्ठसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।9।

दिश आग्नेय में कोठे राजे, मुनिवर जिसमें शोभा पावे ।
कल्पवासिनी देवी बैठी, नारी भी इसमें हैं देखी ।।

ॐ ह्रीं आग्नेयदिशि कोष्ठत्रये दि० मुनिकल्पवासिनी मनुष्यनी संयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।10।

नैर्ऋत्य दिश में कोठे राजे, ज्योतिषी व्यंतर शोभा पावे ।
भवन वासी भी आये यहां पर, दर्शन होवे हैं श्री जिनवर ।।

ॐ ह्रीं नैर्ऋत्यदिशि कोष्ठत्रये ज्योतिष्काव्यन्तरणीभवनवासिनी संयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।11।

तीन कोठे वायव्य बखाने, व्यंतर भवनवासी सब आने ।
ज्योतिष देव सुने जिनवाणी, जिनवर की वाणी कल्याणी ।।

ॐ ह्रीं वायव्यदिशि कोष्ठत्रये ज्योतिष्कभावनव्यन्तरसुरवास संयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।12।

कोठे तीन दिशा ईशान, कल्पवासी सुरनर सब आये ।
बारह में तिर्यंच बताये, सब मिलकर के शीश झुकाये ।।

ॐ ह्रीं ईशानदिशि कोष्ठत्रये कल्पोपपत्रदेवनर तिर्यंचसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।13।

चौथा कोट वज्र का जानो, अड़तालीस वो भाग प्रमानो ।
अष्टम भूमी सभा लगी है, वेदी पांचवीं ज्ञान मयी है ।।

ॐ ह्रीं वज्रशालाष्टचत्वारिंशद्भागे वज्रमयचतुर्थसालतः चतु-
र्विंशति भागवेदिका संयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।14।

वलय व्यास दो तरफ बताया, भाग चौबिसवां है घटवाया ।
हम जिनेन्द्र पूजन में आये, श्रद्धा सुमन साथ में लाये ।।

ॐ ह्रीं अष्टचापोच्चसूचीयुक्त-चतुःसहस्त्रचायप्रथमपीठसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।15।

सोलह पैड़ी प्रथम पीठ में, आठ धनुष ऊंची है उसमें ।
रत्नमयी है शोभा पाये, पुण्य उदय में पाठ रचाये ।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिशि वसुमंगलद्रव्यधर्मचक्रसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।16।

यक्ष देव रक्षा ही करते, प्रथम पीठ पर ठाड़े रहते ।
यद्यपि खतरा वहां न कोई, जिनवर की महिमा है भाई ।।

ॐ ह्रीं बद्धकर-मस्तककस्थधर्मचक्र-यक्षयुक्त प्रथमपीठसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।17।

धर्मचक्र मस्तक पर धरते, प्रभु आज्ञा को सिर पर वरते ।
ऐसे भक्त प्रभु के जानो, आज्ञा पा दीक्षा को मानो ।।

ॐ ह्रीं विचित्रधर्मचक्रसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।18।

दोहा

आरा एक हजार है, धर्म चक्र के बीच ।
सुंदर पहियाकार है, तुम्हें झुकाऊं शीश ।।

ॐ ह्रीं प्रथमपीठे जिनपूजांकृत्वा निजकोष्ठस्थितिसंयुक्त समव- शरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।19।

धर्म चक्र के पास में, मंगल आठ दिखाय ।
तीर्थंकर के महल में, जीव सभी है आय ।।

ॐ ह्रीं द्वितीयपीठे इन्द्रगत्यभावातिशयव्यवस्थासंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।20।

जिनवर पूजा हम करें, इन्द्रदेव गुणवान ।
अपने कोठे बैठके, भक्ती करी महान ।।

ॐ ह्रीं सुवर्णमयोच्चद्वितीयसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।21।

दूजे पीठ न जावता, जिनवाणी को जान ।
अतिशय पुण्यों के धनी, शत् शत् करूं प्रणाम ।।

ॐ ह्रीं विचित्रविविधरचनायुक्तद्वितीयपीठसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।22।

आठ सीढ़ी पच्चीस धनुष, पीठ दूसरा जान ।
स्वर्णों मय है शोभती, तीर्थंकर भगवान ।।

ॐ ह्रीं स्तम्भशिखरामरगोलायुक्तद्वितीयपीठसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।23।

चित्रों की रचना हुई, खम्भ बताये नेक ।
सुंदर सरस सुधार कर, माथा अपना टेक ।।

ॐ ह्रीं विविधरचनायुक्तश्रीमण्डपसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।24।

कंचन मय खंबा खड़े, पंच वर्ण के रत्न ।
शिखर सहित है शोभते, दर्श करन का यत्न ।।

ॐ ह्रीं जिनतनुतः द्वादशगुणोच्चाशोकवृक्षसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।25।

कलशा तुंग ध्वजा चढ़ी, मोती झालर जान ।
श्री मंडप शोभा बढ़े, बारंबार प्रणाम ।।
बारह गुण ऊंचा हुआ, जिन वपु से अशोक ।
चार दिशा के चार हैं, हरता सब का शोक ।।

ॐ ह्रीं श्रीमण्डपोपरि विविधरचनायुक्त अशोकवृक्षशोभासंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।26।

वृक्ष अनोखा है महा, नाशे सबका शोक ।
जड़ हीरा शाखा कनक, दर्श से भागे रोग ।।

ॐ ह्रीं एकसहस्त्रधनुरायत-चतुर्धनुरूच्च-तृतीयपीठसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।27।

पत्र बने पन्ना रतन, फूल लाल मय जान ।
सुंदर फल ही पावते, करता जो परणाम ।।

ॐ ह्रीं महाशोभायुक्ततृतीयपीठसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।28।

मंगलमय मंगल करे, मंगल द्रव्य महान ।
वसु मंगल है शोभते, मंगल मय भगवान ।।

ॐ ह्रीं पीठत्रयोपरि समचतुष्कोणगन्धकुटीसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।29।

एक सहस धनु पीठ है, तीजा नयन निहार ।
चार धनुष ऊंची भई, सीढ़ी सुंदर सार ।।

ॐ ह्रीं गन्धकुटीसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।30।

आठ सीढ़ी रत्नों जड़ी, तृतीय पीठ की जान ।
इन्द्रों ने रचना करी, करते रहे प्रणाम ।।

ॐ ह्रीं अन्तिमत्रयोविंशति जिनेन्द्राणां क्रमहीनविस्तारापन्नगन्ध कुटीसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।31।

तीन पीठ ऊपर विषें, गन्धकुटी मनहार ।
सम चतुष्क के कोण में, होती है तैयार ।।

ॐ ह्रीं वचनागोचर गन्धकुटीसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।32।

गंध कुटी सिंहासन प्यारा, सुंदर-सुंदर दिखे नजारा।
आभामय सुर रत्न जड़े हैं, हाथ जोड़कर सभी खड़े हैं ।।

ॐ ह्रीं सुवर्णमयोच्चद्वितीयसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।33।

सहस पत्र का स्वर्ण कमल है, भाव प्रभु का विमल-विमल है ।
सिंहासन के ऊपर रहता, अमृत का झरना भी बहता ।।

ॐ ह्रीं विचित्रविविधरचनायुक्तद्वितीयपीठसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।34।

अन्तरिक्ष में आप विराजे, देव बजाते सब बाजे ।
निराधारा आधार नहीं है, मेरे प्रभु की बात सही है ।।

ॐ ह्रीं स्तम्भशिखरामरगोलायुक्तद्वितीयपीठसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।35।

भामंडल मंडल में शोभित, भक्त सभी होते हैं मोहित ।
तीर्थंकर रूप अनोखा, दर्शन का मिल जाये मौका ।।

ॐ ह्रीं विविधरचनायुक्तश्रीमण्डपसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।36।

सर्व जिनों की घटे ऊंचाई, आतम में कोई कमी न आई ।
वैभव शक्ति पार पाये, हम चरणों में शीश झुकायें ।।

ॐ ह्रीं जिनतनुतः द्वादशगुणोच्चाशोकवृक्षसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।37।

वेदी कोट सुमंदिर सौहे, दूर से ही सबका मन मोहे ।
नृत्यशाला और वृक्ष बने हैं, सुंदर मंदिन वहां खड़े हैं ।।

ॐ ह्रीं श्रीमण्डपोपरि विविधरचनायुक्त शोकवृक्षशोभासंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।38।

गन्ध कुटी पूजा

दोहा (स्थापना)

गंध कुटी के मध्य में, राजे देव महान् ।
द्रव्य थाल ले हाथ में, शत्-शत् करूं प्रणाम ।।
छत्र फिरे वंदन लगे, शोभा हर्ष अपार ।
अतिशय प्रगटे देव के, दिखे धर्म का सार ।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति तीर्थंकर समवसरण स्थित गंध कुटी समूह अत्र, अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं, अत्र

तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं, अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम् । परिपुष्पांजलि क्षिपेत्

(तर्ज : नीर गंध.....)

हे जगत के देव मेरी, प्रार्थना सुनीजिये ।
ले के जल मैं आ गया, ध्यान मुझपे दीजिये ।।
गंधकुटी पूजहूं, जी जिनेश राजते ।
दर्श होय एक बार, कर्म सारे भाजते ।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति तीर्थंकर समवसरण स्थित गंध कुटीभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

अंतरंग शांत हो, ताप दूर कीजिए ।
विभाव से स्वभाव हो, भक्त शरण लीजिए ।।
गंधकुटी पूजहूं.....

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति तीर्थंकर समवसरण स्थित गंध कुटीभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वार्थ औ पदार्थ में, समस्त अर्थ भूलते ।
ज्ञान मूर्ति आप हो, नहिं जगत मे झूलते ।।
गंधकुटी पूजहूं.....

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति तीर्थंकर समवसरण स्थित गंध कुटीभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

दर्श ज्ञान सौख्य वीर्य, निजात्म के ही संग में ।
परन्तु कर्म ढांकते, रंगे उसी के रंग में ।।
गंधकुटी पूजहूं, जी जिनेश राजते ।
दर्श होय एक बार, कर्म सारे भाजते ।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति तीर्थंकर समवसरण स्थित गंध कुटीभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

भूख भौज्य मांगता, ना आत्म ध्यान ध्यावता ।
भूख नष्ट हो मेरी, मैं तव चरण में आवता ।।
गंधकुटी पूजहूं.....

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति तीर्थंकर समवसरण स्थित गंध कुटीभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञान रश्मि का प्रकाश, भौतिकी से तेज है ।
पूर्ण ज्ञान प्राप्त हो, धर्म की ये सेज है ।।
गंधकुटी पूजहूं.....

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति तीर्थंकर समवसरण स्थित गंध कुटीभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्वव्यापी धर्म है, किंतु धर्म दूर है ।
धूप कर्म की उड़े, औ ज्ञान आवे पूर है ।।

गंधकुटी पूजहूं, जी जिनेश राजते ।
दर्श होय एक बार, कर्म सारे भाजते ।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति तीर्थंकर समवसरण स्थित गंध कुटीभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्म देव सौख्य दुःख, शोक हर्ष में करूं ।
चाहूं फल मैं मुक्ति का, नित चरण में फल धरूं ।।
गंधकुटी पूजहूं.....

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति तीर्थंकर समवसरण स्थित गंध कुटीभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्ट द्रव्य अर्घ्य ले, पूजने को आ गया ।
तेरा ही स्वरूप मुझे, हे जिनेन्द्र भा गया ।।
गंधकुटी पूजहूं, जी जिनेश राजते ।
दर्श होय एक बार, कर्म सारे भाजते ।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति तीर्थंकर समवसरण स्थित गंध कुटीभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'अथ प्रत्येक अर्घ्य'

दोहा

आत्मज्ञान प्रतिबिम्ब है, ज्ञान का तेज अपार ।

ज्ञानी मेरे देव हैं, देवें सौख्य अपार ।।

इति मण्डलस्योपरि पुष्पांजलि क्षिपेत् ।

चाल

रत्नोंमय पीठ बने हैं, किरणों के पुंज घने हैं ।
श्री आदिनाथ जिनदेवा, मैं करूँ चरण की सेवा ।।
यह गंध कुटी शुभ प्यारी, जिनवर की शोभा न्यारी,
भावों से अर्घ्य चढ़ायें, हम समवशरण में जायें ।।

ॐ ह्रीं वृषभदेवसमवसरण स्थित तृतीय पीठो परिगंध कुट्यै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निष्काम योग को धारा, कर्मों का रेला हारा ।
जिन अजित जगत को जीते, सारे कर्मों से रीते ।।
यह गंध कुटी शुभ प्यारी.....

ॐ ह्रीं अजितनाथसमवसरण स्थित तृतीय पीठो परिगंध कुट्यै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पी आत्मानंद का प्याला, तोड़ा कर्मों का जाला ।
संभव भव संभव करते, सारे कर्मों को हरते ।।
यह गंध कुटी शुभ प्यारी.....

ॐ ह्रीं संभवनाथसमवसरण स्थित तृतीय पीठो परिगंध कुट्यै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सौभाग्य जगा नंदन का, मेला छूटा बंधन का ।
अभिनंदन आनंद पाये, ज्ञानामृत भी बरसाये ।।
यह गंध कुटी शुभ प्यारी, जिनवर की शोभा न्यारी,
भावों से अर्घ्य चढ़ायें, हम समवशरण में जायें ।।

ॐ ह्रीं अभिनंदननाथ समवसरण स्थित तृतीय पीठो परिगंध कुट्यै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अंतस का सूर्य उगाया, फिर ज्ञान किरण फैलाया ।
सुमति का धन बढ़ जाये, पाने चरणों में आये ।।
यह गंध कुटी शुभ प्यारी.....

ॐ ह्रीं सुमतिनाथसमवसरण स्थित तृतीय पीठो परिगंध कुट्यै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सिंहासन रत्न जड़े हैं, द्वारों पर देव खड़े हैं ।
निज धर्म फूल खिल जाये, पदमा की शरणा आये ।।
यह गंध कुटी शुभ प्यारी.....

ॐ ह्रीं पद्मप्रभुनाथ समवसरण स्थित तृतीय पीठो परिगंध कुट्यै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गंगा सम स्वच्छ बनाये, आतम में ध्यान लगाये ।

दिव्यामृत जिनवर देते, संकट सारे हर लेते ।।
यह गंध कुटी शुभ प्यारी, जिनवर की शोभा न्यारी,
भावों से अर्घ्य चढ़ायें, हम समवशरण में जायें ।।

ॐ ह्रीं सुपार्श्वनाथसमवसरण स्थित तृतीय पीठो परिगंध कुट्यै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आराध्य हमारे चंदा, आराधक आया बंदा ।
उजियारा प्रभु फैलाओ, चरणों के पास बुलाओ ।।
यह गंध कुटी शुभ प्यारी.....

ॐ ह्रीं चन्द्रप्रभजिन समवसरण स्थित तृतीय पीठो परिगंध कुट्यै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सारे थे शुभ ही लक्षण, पाया था रूप विलक्षण ।
हे पुष्पदंत जी भगवन, आया हूँ तेरे चरणन ।।
यह गंध कुटी शुभ प्यारी.....

ॐ ह्रीं पुष्पदंतजिन समवसरण स्थित तृतीय पीठो परिगंध कुट्यै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तप से शीतलता पाई, शीतल शुभ गंध उड़ाई ।
शीतल-शीतल के देवा, नित करूं आपकी सेवा ।।
यह गंध कुटी शुभ प्यारी.....

ॐ ह्रीं शीतलनाथ समवसरण स्थित तृतीय पीठो परिगंध कुट्यै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नीति-रीति अपनाई, तप सौख्य संपदा पाई ।
श्रेयांस श्रेष्ठ पद पाया, चरणों में भाव जगाया ।।
यह गंध कुटी शुभ प्यारी, जिनवर की शोभा न्यारी,
भावों से अर्घ्य चढ़ायें, हम समवशरण में जायें ।।

ॐ ह्रीं श्रेयांशनाथ समवसरण स्थित तृतीय पीठो परिगंध कुट्यै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तज राग द्वेष का मेला, हो वीतरागी जिन बेला ।
वसुधा पर जिनवर आये, घर द्वार छोड़ हम आये ।।
यह गंध कुटी शुभ प्यारी.....

ॐ ह्रीं वासुपूज्यजिन समवसरण स्थित तृतीय पीठो परिगंध कुट्यै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भक्तों का हृदय खिलाया, सम्यक् दर्शन दिलवाया ।
जय विमलनाथजिन स्वामी, दुख मेटो अन्तरयामी ।।
यह गंध कुटी शुभ प्यारी.....

ॐ ह्रीं विमलनाथजिन समवसरण स्थित तृतीय पीठो परिगंध कुट्यै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वर्णिम इतिहास बनाया, आदर्शमयी पथ पाया ।

कर्मों का अंत है कीना, शाश्वत सुख को पा लीना ।।
यह गंध कुटी शुभ प्यारी, जिनवर की शोभा न्यारी,
भावों से अर्घ्य चढ़ायें, हम समवशरण में जायें ।।

ॐ ह्रीं अनंतनाथजिन समवसरण स्थित तृतीय पीठो परिगंध कुट्यै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निर्लिप्त निरंजन हो तुम, पापों के भंजन हो तुम ।
जिनधरम धरम को बांटें, सबके पापों को छांटें ।।
यह गंध कुटी शुभ प्यारी.....

ॐ ह्रीं धर्मनाथजिन समवसरण स्थित तृतीय पीठो परिगंध कुट्यै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भक्तों को शक्ति देते, कर्मों को सब हर लेते ।
श्री शान्तिनाथजी देवा, मैं करूं आपकी सेवा ।।
यह गंध कुटी शुभ प्यारी, जिनवर की शोभा न्यारी,
भावों से अर्घ्य चढ़ायें, हम समवशरण में जायें ।।

ॐ ह्रीं शांतिनाथ समवसरण स्थित तृतीय पीठो परिगंध कुट्यै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ समवशरण रचवाया, भक्तों को पास बुलाया ।
संदेश धर्म का देते, काले कलमश हर लेते ।।

यह गंध कुटी शुभ प्यारी, जिनवर की शोभा न्यारी,
भावों से अर्घ्य चढ़ायें, हम समवशरण में जायें ।।

ॐ ह्रीं कुंथुनाथ समवसरण स्थित तृतीय पीठो परिगंध कुट्यै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

आतम पर शासन कीना, आतम से आतम लीना ।
अर अरि कर्म विनशायें, मुक्ति में जा बस जायें ।।
यह गंध कुटी शुभ प्यारी.....

ॐ ह्रीं अरहनाथ समवसरण स्थित तृतीय पीठो परिगंध कुट्यै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

सतयुग में सत की सत्ता, प्रगटाई थी भगवत्ता ।
निज कर्मों का मल धोया, ना पाप बीज का बोया ।।
यह गंध कुटी शुभ प्यारी.....

ॐ ह्रीं मल्लिनाथ समवसरण स्थित तृतीय पीठो परिगंध कुट्यै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

केवल की किरणें फैलीं, गणधर ने वाणी झेली ।
मुनिसुव्रत व्रत को देते, आतम की शुद्धि करते ।।
यह गंध कुटी शुभ प्यारी.....

ॐ ह्रीं मुनिसुव्रतनाथ समवसरण स्थित तृतीय पीठो परिगंध कुट्यै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

घनघोर तपस्या कीनी, निज में निज दृष्टि दीनो ।
जिन भेद ज्ञान प्रगटाया, मैं समोशरण में आया ।।
यह गंध कुटी शुभ प्यारी, जिनवर की शोभा न्यारी,
भावों से अर्घ्य चढ़ायें, हम समवशरण में जायें ।।

ॐ ह्रीं नमिनाथ समवसरण स्थित तृतीय पीठो परिगंध कुट्यै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जग में हो करूणा नंदन, हम करते तुमको वंदन ।
राजुल से मुख को मोड़ा, मुक्ति से नाता जोड़ा ।।
यह गंध कुटी शुभ प्यारी.....

ॐ ह्रीं नेमिनाथ समवसरण स्थित तृतीय पीठो परिगंध कुट्यै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पारस अमृत बरसाते, भक्ति से भक्त नहाते ।
मैं अमृत पाने आया, चरणों में अर्घ्य चढ़ाया ।।
यह गंध कुटी शुभ प्यारी.....

ॐ ह्रीं पार्श्वनाथ समवसरण स्थित तृतीय पीठो परिगंध कुट्यै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अंतिम तीर्थंकर वीरा, जैसे रत्नों में हीरा ।
सुर नर पूजा को आये, आकर के अर्घ्य चढ़ायें ।।

यह गंध कुटी शुभ प्यारी, जिनवर की शोभा न्यारी,
भावों से अर्घ्य चढ़ायें, हम समवशरण में जायें ।।

ॐ ह्रीं महावीर समवसरण स्थित तृतीय पीठो परिगंध कुट्यै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

अष्ट द्रव्य मंगल सहित, गंधकुटी शुभ जान ।
वास करें जिनदेव जी, शत्-शत् करूं प्रणाम ।।

इति मण्डलस्योपरि पुष्पांजलि क्षिपेत् ।

जयमाला

चौपाई

तीर्थंकर को नमस्कार हो, जिनवर जी को नमस्कार हो ।
गंधकुटी शुभ शोभा पाये, करने दर्शन भक्त भी आये ।
सम्पत्ति स्वर्गों से आयी, समवशरण रचना करवायी ।
हाथ जोड़कर इन्द्र भी बैठे, रूप निहारे जिनवर देखे ।
चहूं दिशं में सजती मालायें, नृत्य करें संग में बालायें ।

कनक कांति सम रूप सम्हारे, भक्त एकटक तुम्हें निहारे ।
ध्वज की पंक्ति शोभ बढ़ायें, केशरिया सम गगन दिखाये ।
रत्न जड़ित सिंहासन प्यारा, दूर-दूर से दिखे नजारा ।
मंगल द्रव्य है मंगलकारी, द्रव्य आठ लगते सुखकारी ।
दिव्य ध्वनि उपदेश की वाणी, गणधर समझाते बन ज्ञानी ।
महिमा प्रभु गणधर भी गाये, तो भी ना पूरी कर पाये ।
झूम-झूम कर इन्द्र भी नाचे, धर्म कथा को नित ही वाचे ।
मंद वृष्टि, शीतल वायु, घटती ना है कुछ भी आयु ।
शुभ तरू अशोक जिनके पीछे, प्रभुवर बैठे आंखें मीचे ।
शुभ तीन छत्र सिर पर फिरते, सब फूल पंक्तियों में गिरते ।
हिंसा होती है वहां नहीं, चोरी का कोई धाम नहीं ।
आंसू का कोई काम नहीं, दुख का होवे विश्राम नहीं ।
आगम ने गम को है मारा, सुख ने सारे दुःख को तारा ।
शास्त्रों ने शस्त्र को दूर किया, अम्बर ने वस्त्र को दूर किया ।
तम गम नम होकर के जाते, छल कपट वहां न रूक पाते ।

चरणों की धूलि सिर धारूं, फिर नहिं किसी से मैं हारूं ।
श्रद्धा भी है विश्वास भी है, भक्ति करती हूं आश भी है ।
आतम दर्शन मम करवाना, निज आतम रूप संवर जाना ।
डाली से टूटे फूल तभी, जब होय समाधि मेरी सही ।
चेतन औ तन को पहचानूं, दोनों को भिन्न-भिन्न जानूं ।
मिट्टी की मूर्ति बन जाये, भक्ति से आत्म निखर जाये ।
मैं नहीं कभी लाचार बनूं, दुखियों के आंसू पोंछ सकूं ।
किसकी दुनियां किसका नाता, स्वारथ के साथी सब भ्राता ।
जब मोह नष्ट हो जायेगा, यह जनम मरण नश जायेगा ।
तुम मोह से नाता तोड़ लिया, आतम से नाता जोड़ दिया ।
तुम सत्य सूर्य प्रगटाया है, भक्तों को ज्ञान सिखाया है ।
हम गंध कुटी के दर्श करें, दर्शन करके हम हर्ष धरें ।
समकित रत्नों को पाऊं मैं, मुक्ति में जा बस जाऊं मैं ।
'स्वस्ति' को चरणों में रखना, शुभ गंधकुटी का रस चखना ।

दोहा गंध कुटी शुभ तीर्थ है, करूं नित्य स्नान ।
मिले आसरा प्रभु चरण, बारम्बार प्रणाम ।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति तीर्थंकर गंधकुटी स्थित तृतीय पीठो
अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

धरूं आशिका शीश पर, शुभाशीष दें देव ।
भव सागर से तर सकूं, करूं आपकी सेव ।।

इत्याशीर्वाद पुष्पांजलि क्षिपेत्

चक्रवर्ती बलभद्र नारायण कामदेव आदि अनेक राजाओं द्वारा

समवशरण में क्रियमाण पूजा

दोहा

चक्रवर्ती बलभद्रजी, समवशरण में आये ।
महापुरूष भी आय के, चरणन शीश झुकाये ।।

भावों की शुद्धी करूं, पूजा करके आज ।
तीर्थंकर भगवान को, नमता सकल समाज ।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ जिनेन्द्राय अत्र अवतर अवतर संवौषट आह्वानन, अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनं, अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणं।

गीता-छंद

नीर है जग में बहु पर, रतनत्रय निर्मल कहा ।
मैं क्षीर सा ही नीर लाया, भाव शुद्धी हो महा ।।
बलभद्र चक्री भूप मिल, जिनदेव की पूजा करें ।
शुभ भाव से चरणों में आये, कर्म सारे परि हरे ।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ जिनेन्द्राय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

हो शांत शिव सुंदर प्रभो, न ताप संताप है ।
ले चंदनादि पूजता, मेटो सकल भवताप है ।।
बलभद्र चक्री भूप मिल.....

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ जिनेन्द्राय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

पग-पग पे जाके पद बदलना, आप इससे दूर हैं

अक्षयपुरी के हो निवासी, सौख्य भी भरपूर है ।।
बलभद्र चक्री भूप मिल, जिनदेव की पूजा करें ।
शुभ भाव से चरणों में आये, कर्म सारे परि हरे ।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ जिनेन्द्राय अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

रति छोड़ अविरति पाने को, प्रभु पुष्प सुंदर लाये हैं ।
मम आत्मा रक्षित करो, यह भावना ही भाये है ।।
बलभद्र चक्री भूप मिल.....

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ जिनेन्द्राय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

कामना से दूर तुम हो, साधना अतिशय धनी ।
तुम वैद्य हो, नैवेद्य के, प्रभु आज तुमसे ही बनी ।।
बलभद्र चक्री भूप मिल.....

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ जिनेन्द्राय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मिथ्यात्व का तम है घना, सम्यक उजाला चाहिये ।
यह दीप रत्नोंमय चढ़ाऊं, ज्ञान केवल चाहिये ।।
बलभद्र चक्री भूप मिल.....

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ जिनेन्द्राय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।
अवगुण हैं रहते दूर तुमसे, गुण के प्रभु भंडार हैं ।
दोषों की धूप चढ़ाऊं भगवन, मिले मुक्ति द्वार है ।।
बलभद्र चक्री भूप मिल, जिनदेव की पूजा करें ।
शुभ भाव से चरणों में आये, कर्म सारे परि हरे ।।
ॐ ह्रीं समवशरणस्थ जिनेन्द्राय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।
सद्बुद्धि श्रावक मुक्ति पथपर, आगे को बढ़ता चले ।
फल को चढ़ाऊं, फल न चाहूं, साधना दीपक जले ।।
बलभद्र चक्री भूप मिल.....
ॐ ह्रीं समवशरणस्थ जिनेन्द्राय फलं निर्वपामीति स्वाहा।
चारों कषायों का शमन कर, भावना शुभ भाऊंगा ।
यह अर्घ्य ज्योति साथ लाया, निज में ही रम जाऊंगा ।।
बलभद्र चक्री भूप मिल.....
ॐ ह्रीं समवशरणस्थ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

त्रिभंगी

निजफूल खिलाकर, हर्ष बढ़ाकर, राजा पूजन को आये ।
भवताप मिटाये, पुष्प चढ़ाये, श्रद्धा भर आतम लाये ।।
प्रभु रोशन करते, दोष को हरते, दीक्षा को सबने पाया ।
कर्मों का झरना, पाप को हरना, आतम आनंद है आया ।।

चौपाई

चारों घाती कर्म नशाये, चार चतुष्टय प्रभु ने पाये ।
चार ध्यान को ध्याया प्रभु ने, आतम आनंद लिया था निज में ।।
राक्षस क्रोध भी दूर है भागा, क्षमा भाव का धर्म है जागा ।
क्रोधी आकर क्रोध नशाये, मन में अतिशय शांति पाये ।।
क्रोध करें जीवों की हिंसा, क्रोध करे भावों की हिंसा ।
क्रोध पाप को पास बुलाता, क्रोध जगत में है भटकाता ।।
दुखी क्रोध से जनता सारी, फिर भी क्रोध न छूटे भारी ।
मित्र क्रोध ने शत्रु बनाया, अपना ही तब हुआ पराया ।।

अपना सपना ही हो जावे, जब राक्षस यह क्रोध है आवे ।
समता औ सद्गुण हटजावे, जीवों को जग में भटकावे ।।
मोह क्रोध का जनक बताया, मिथ्या इसने ज्ञान बनाया ।
स्वयं फले सबको फलवाये, मोही मोह में धर्म न पाये ।।
समता सुधा ज्ञान भंडारी, समवशरण की महिमा न्यारी ।
स्वयं तिरे सबको तिरवावे, जो भी तेरी शरण में आवे ।।
आप क्रोध को दूर हटाया, क्षमा भाव निज में प्रगटाया ।
निज में निज का ध्यान लगाया, दुष्ट कर्म को आप भगाया ।।
अनन्त चतुष्टय के तुम धारी, केवल ज्ञान हो भंडारी ।
समवशरण रचना हुई सुंदर, हर्षे इन्द्र भी मन में अंदर ।।
देव देवियां स्वर्ग से आईं, प्रभु दर्शन कर वे हर्षाईं ।
चक्रवर्ती बलदेव भी आये, चरणों में वह शीश झुकाये ।
कामदेव नारायण आया, महा पूजा का पाठ कराया ।।
द्रव्यों के बहु थाल भराये, गंगा सम वह नीर चढ़ाये ।।
चंदन पर भौंरे गुंजाये, धूप चढ़े तो मेघ बनाये ।

अर्घों का पर्वत बन जाये, महा पूजा महापुरूष कराये ।।
राजा मंडलीक मंडल भी, महा पूजा मंगलमय होती ।
समवशरण का अतिशय भारी, सम अवसर पाये नरनारी ।।
चौबीस जिन को शीश झुकायें, चरणों में हम पूज रचायें ।
जिनवर सबको मिलती, सम्यग्ज्ञान की कलियां खिलतीं ।।
नर तिर्यंच भी भक्ती गावें, गाकर अतिशय पुण्य कमावें ।
जिनवर अमृत ज्ञान में बांटे, फूल ही फूल नहीं हैं कांटे ।।
हो दर्शन कब समवशरण के, हो स्पर्शन प्रभु चरण के ।
'स्वस्ति' भी यह आश लगाये, कब आकर प्रभु दर्श दिखायें ।।

दोहा

समवशरण जिनदेव का, तारे मोक्ष मझार ।
अवसर मुझ को भी मिले, हम भी हैं तैयार ।।
महापुरूष सम पूजा कर, महाभाव प्रगटाय ।
महा मोक्ष पदवी मिले, शत्-शत् शीश नवाय ।।

ॐ ह्रीं समोवशरणस्थ चतुर्विंशति जिनेन्द्रभ्यः पूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

समुच्चय पूजा प्रारम्भ

स्थापना

(गीता छंद)

त्रैलोक्य में जिन चैत्य हैं, मिल हम सभी पूजा करें ।
संसार सागर पार होने, आराधना हम नित करें ।
भगवान की भक्ति सभी को, शान्ति सुख समृद्धि दे ।
मनहर प्रभु की मूर्ति ही, सब ऋद्धि दे सब सिद्धि दे।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री चतुर्विंशति जिन अत्र, अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं, अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं, अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम् । परिपुष्पांजलि क्षिपेत्

शंभु छंद

जल का स्वभाव तो निर्मल है, तन मन को शुची बनाता है ।
निज आत्म शुद्धि की प्राप्ति करे, जिससे मम हिय हर्षाता है ।।
संसार में हमने जिनवर जी, कर्मों के सारे कष्ट सहे ।

चौबीसों जिन पूजन करते, स्वर्गापवर्ग का मार्ग लहे ।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री चतुर्विंशति तीर्थंकर जिनेन्द्राय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

संसार ताप संताप प्रभो, क्षण-क्षण में दु:ख बढ़ाता है ।
मन चिंता-चिंता करता है, वह चैन कहीं ना पाता है ।।
संसार में हमने जिनवर जी.....

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री चतुर्विंशति तीर्थंकर जिनेन्द्राय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षय क्षय विक्षत होता है, प्रतिपल पर्याय बदलती है ।
अक्षय पद मुझको मिल जाये, ऐसी प्रभु मेरी विनती है ।।
संसार में हमने जिनवर जी.....

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री चतुर्विंशति तीर्थंकर जिनेन्द्राय अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्पों की गंध तो नश्वर है, खुशबू निज आतम की फैले ।
चरणों में पुष्प मैं लाया हूं, संयम से आतम में रह ले ।।
संसार में हमने जिनवर जी.....

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री चतुर्विंशति तीर्थंकर जिनेन्द्राय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

व्यंजन नित नये बना खाये, पर तृप्त नहीं यह मन होता ।

व्यंजन की थाली ले आया, जो क्षुधा रोग को नश देता ।।
संसार में हमने जिनवर जी, कर्मों के सारे कष्ट सहे ।
चौबीसों जिन पूजन करते, स्वर्गापवर्ग का मार्ग लहे ।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री चतुर्विंशति तीर्थंकर जिनेन्द्राय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अंधियारा मोह महातम है, निज याथायथ्य न दिख पाया ।
मालायें दीपक की लेकर, जिनवर पूजन को मैं आया ।।
संसार में हमने जिनवर जी.....

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री चतुर्विंशति तीर्थंकर जिनेन्द्राय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

बहु कर्मों का ही जोर चले, पुरूषार्थ हीन हो जाता हूं ।
कर्मों का धुआं उड़ाने को, मैं धूप चरण में लाता हूं ।।
संसार में हमने जिनवर जी.....

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री चतुर्विंशति तीर्थंकर जिनेन्द्राय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

तेरी पूजन से हे प्रभुवर, मैं मुक्ती फल की चाह करूं ।
पर सुःख नहीं है इस जग में, फल अर्पण कर शिवनारी वरूं ।।
संसार में हमने जिनवर जी.....

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री चतुर्विंशति तीर्थंकर जिनेन्द्राय फलं निर्वपामीति स्वाहा।

ये अर्घ्य करे उपसर्ग दूर, फिर मैं अनर्घ्य पद पाऊंगा ।
चरणों में अर्घ्य चढ़ा करके, मैं तो मुक्ती को जाऊंगा ।।
संसार में हमने जिनवर जी, कर्मों के सारे कष्ट सहे ।
चौबीसों जिन पूजन करते, स्वर्गापवर्ग का मार्ग लहे ।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री चतुर्विंशति तीर्थंकर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

।। जयमाला ।।

(त्रिभंगी छंद)

चौबीस जिन स्वामी, अंतर्यामी, कष्ट हटाये सुखकारी ।
त्रिभुवन के दाता, जग विख्याता, मिलेगी साता हे स्वामी ।।

(पद्धड़ी छंद)

जय ऋषभ देव अंतर्यामी, हे अजितनाथ सबके स्वामी ।
जय संभव भव का करें नाश, अभिनन्दन जग करते प्रकाश ।
जय सुमति-सुमति दायक दयाल, जय पद्म प्रभु हर्षे है ताल ।
जय-जय सुपार्श्व है मुक्ति वास, चंदा प्रभु करते हैं उजाश ।

पुष्पों से सुंदर पुष्पदंत, चंदन से शीतल मुक्ति कंत ।
श्रेयांस नाथ हैं श्रेष्ठ धनी, जय वासुपूज्य तुम मुक्ति सनी ।
निर्मल-निर्मल हैं विमलनाथ, जय प्रभु अनन्त भक्तों के साथ ।
जय धर्म-धर्म को करें दान, जय शान्ति-शान्ति दाता महान ।
जय कुंथुनाथ चक्री विशेष, अर जिन के संग न कर्म लेश ।
जय मल्लिनाथ शिव शांति वरें, मुनिसुव्रत पीड़ा दूर करें ।
जय नमिनाथ निज ध्यान किया, नेमी भव बंधन तोड़ दिया ।
पारस सब चिंता दूर करें, श्री महावीर का ध्यान धरें ।
कर्मों के हम तो हैं सताये, चौबिस जिन की पूजा रचायें ।
मन वच तन से हम करें भक्ति, संसार चक्र से होय मुक्ति ।

समुच्चय अर्घ्य

दोहा : चौबीसों के चरण पद, जो पूजें सुखकार ।
"स्वस्ति" मोक्ष पदवी मिले, आतम आनन्दकार ।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री चतुर्विंशति तीर्थंकर जिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सम्पूर्ण जयमाला

त्रिभंगी छंद

चौबीस जिनन्दा, तोड़े फन्दा, समवशरण सुंदर पाया ।
तब रोग नशाये, शोक भगाये, जग में सबसे है न्यारा ।।
कर्मों की राशि, मोह की फांसी, जीवों को दु:खमय करती ।
तुम चरण जो आवे, शांति पावे, दु:खियों के दुख को हरती ।।

पद्धरि छंद

श्री अरहंता देव नमस्ते, श्री भगवंता देव नमस्ते ।
चार घातियां घात नमस्ते, जोड़ के दोनों हाथ नमस्ते ।
कल्याणक को पाय नमस्ते, इन्द्र देव हर्षाय नमस्ते ।
भक्त के पालन हार नमस्ते, संकट टारन हार नमस्ते ।
मोह महातम नाश नमस्ते, गुणगण है वास नमस्ते ।
मूलगुण छयालीस नमस्ते, तुमको शीश झुकाऊं नमस्ते ।
सम अवसर दातार नमस्ते, पंच महा पालाय नमस्ते ।

नाथों के हो नाथ नमस्ते, दीन दुखी के साथ नमस्ते ।
केवल ज्ञान की ज्योति नमस्ते, आनंद पाय मोती नमस्ते ।
जनमत अतिशय होय नमस्ते, वसुधा रत्न गिराय नमस्ते ।
पुण्य देय भंडार नमस्ते, मुक्ति पद दरशाय नमस्ते ।
प्रातिहार्य से सहित नमस्ते, अवगुण से हो रहित नमस्ते ।
दीक्षा देवन हार नमस्ते, शिक्षा देवन हार नमस्ते ।
जिनवाणी के पूत नमस्ते, शांति के साम्राज्य नमस्ते ।
जय जय जय उच्चार नमस्ते, धर्म की आय बहार नमस्ते ।
दुंदुभि सुस्वर गान नमस्ते, पुष्पवृष्टि वरदान नमस्ते ।
हो टिमकार से रहित नमस्ते, ओठ् हिले न आप नमस्ते ।
बरसे अमृत धार नमस्ते, पाये सब नर नार नमस्ते ।
रोग शोक का नाश नमस्ते, अशुभ भाव का नाश नमस्ते ।
चरण शरण शत्बार नमस्ते, मुक्ति वरण मनहार नमस्ते ।
'स्वस्ति' कर प्रणाम नमस्ते, गुण-गण के तुम धाम नमस्ते ।

शंभू-छंद

करूणासागर गुण गण आधार, भक्तों की टोली आई है ।
प्रभु सौख्य हटा संपत्ति वर दो, भावों की झोली लाई है ।
शुभ समवशरण प्रभु दर्शन कर, सम्यग्दर्शन हो जाता है ।
अज्ञान हटे सब द्वेष मिटे, तन की निरोगता पाता है ।
बिन इच्छा होता गमन देव, करके बिहार वो जाते हैं ।
कमलों से चतु अंगुल ऊपर, रख पग विहार वो करते हैं ।
है भाग्यवान वोही प्रभुवर, जो आपके साथ में चलते हैं ।
पग पग पर कमलों की रचना, यह इन्द्र सभी करवाते हैं ।
जो पुण्य धरा उस पर वाणी, श्री जिनवर जी बिखराते हैं ।
अमृत पाकर भव्यों के मन, औ रोम रोम खिल जाते हैं ।
वसु कर्म तत्व बारह भावों का, ध्यान वहां करवाते हैं ।
आया विराग दीक्षा लेते, वे मुक्तिपुरी को जाते हैं ।
षट् ऋतुओं के फल फूल सभी, नगरों शहरों में आते हैं ।
धूली कंटक वसु कोई नहीं, औ पाप सभी भग जाते हैं ।

वापी तलाब में जल आया, रत्नों के कमल भी खिलते हैं ।
मारे गोता ज्ञानामृत में, संयम के मोती मिलते हैं ।
मुनिवर चलते श्रावक चलते, और देव आर्यिका चलती हैं ।
तिर्यंच चले विद्याधर भी, गुण बगिया क्यारी खिलती है ।
आगे-आगे है धर्मचक्र, संदेश धरम का देता है ।
सारी धरती मंगलमय हो, मंगल सबका कर देता है ।
संतोष सभी जन पाते हैं, औ काम क्रोध कुछ दोष नहीं ।
जिनवर का अतिशय बिखर रहा, हिंसा चोरी और भूख नहीं ।
जय जय की ध्वनि करते चलते, मन प्रमुदित हो जय करता है ।
हुई प्रभु की जय मेरी होवे, फूलों से भाव संजोता है ।
चौबीसों जिन का समवशरण, रचना समान ही होती है ।
क्रम से योजन घटता जाता, बाकी सब एक सी होती है ।
श्री वृषभनाथ से महावीर तक, सबको शीश झुकाते हैं ।
'स्वस्ति' हो प्रत्यक्ष दर्श, हम यही भावना भाते हैं ।

शेर चाल (हे दीन बन्धु....)

चऊ कर्म किये नाश तो, अरिहंत बन गये ।
जीवों की शरण देने से, तुम नाथ बन गये ।।
समभाव से समज्ञान सभी, जीव को दिया ।
भव्यों ने आके चरणों में, अमृत का रस पिया ।।
धन धान्य सफल हो गया, जिन देवजी मेरा ।
पूजा करी जो आप की, हो भाग्य सबेरा ।।
ये हाथ सफल हो गये, औ कान भी हुये ।
आंखों ने पाया दर्श तेरा ध्यान भी किये ।।
श्री आदि ने कैलाश में जा धाम बनाया ।
श्री वासुपूज्य चंपापुरी ध्यान में ध्याया ।।
श्री नेमी ने गिरनार में, मुक्ति को बुलाया ।
पावापुरी में वीरा जी ने कमल खिलाया ।।
सम्मेद शिखर सिद्ध भूमि, सिद्ध हो गये ।
शाश्वत बताया यह गिरी, जिन देव हो गये ।।
जिनबीस ने निर्वाण गिरी, मोक्ष को पाया ।

आकर के श्रद्धा भक्ति से है, शीश झुकाया ।।
होवे चतुर्थ काल तो प्रत्यक्ष दर्श हो ।
वरना विदेह जाके जिया, पावे हर्ष वो ।।
जब श्वास चले, तेरा नाम, गाता मैं रहूं ।
अंतिम समय में 'स्वस्ति' तेरा ध्यान ही करूं ।।

ॐ ह्रीं समोवशरणस्थ चतुर्विंशति जिनेन्द्रभ्य गणधर आदि मुनिभ्यों नमः महार्घं निर्वपामीति स्वाहा। (गोला सहित पूर्ण अर्घ चढ़ाना है।)

दोहा

समवशरण जिन देव का, स्वर्ग मोक्ष का धाम ।
अर्घ्य समर्पित चरण में, बारंबार प्रणाम ।।

(प्रशस्ति)

चौपाई

जिन भक्ति जिन गान किया है, प्रभुवर तेरा ध्यान किया है ।
भक्ति मय हो गुण को गाये, पूजन को हम तेरी आये ।।
उत्तम द्रव्य भाव उत्तम है, मेरे जिनवर भी उत्तम है ।

उत्तम जिनवर का मंदिर है, हृदय मे मेरे जिन मंदिर है ।।
समवशरण का पूज रचाया, समवशरण दर्शन को आया ।
रोम रोम हो गया है हर्षित, तन मन मेरा है आकर्षित ।।
भाव विभोर रचना कीनी, 'स्वस्ति' जिन भक्ति कर दीनी ।
मेरठ में प्रारंभ किया था, लिख-लिख कर आनंद लिया था ।।
हरिद्वार में पूर्ण हुआ है, आदिनाथ आशीष लिया है ।
सावन वदी सप्तम है प्यारी, द्विसहस्र चतु सन है न्यारी ।।
समवशरण का पाठ बनाया, जिनवर का गुण गान कराया ।
हुई जो भूल सुधार के पढ़ना, अच्छा है उसको तुम गाना ।।
'स्वस्ति' निज कर्त्तव्य निभाऊं, मुक्ति सुंदरी को ही पाऊं ।।